जुलाई १९५६

हमारा गांधी-साहित्य

१—गांधीवाद की रूपरेखा (सुमन)	२)
२—गांधी-मार्ग (कृपलानी)	२।)
३—युगाधार गांधी (सुमन)	२।)
४—गांधीवाणी (सुमन)	१।)
५—स्त्रियों की समस्याएँ (गांधीजी)	१।)
६—अमृतवाणी (गांधीजी)	१।)

मुद्रक
माधव प्रेस
बाई का बाग
इलाहाबाद

थे। जब तुच्छ स्वार्थ लोभ और दैन्य ने हमें अपने प्रति अविश्वस्त और मूर्च्छित कर रखा है तब मानों वे हमें पुकार कर कहते हैं—तुम मनुष्य हो तुममें ईश्वरांश है—तुम अपने ईश्वरत्व को भूल कर नहीं बच सकते, तुम्हें अपने पशुत्व से उठना ही पड़ेगा।............

• • •

गांधीजी राजनीतिक और सामाजिक जीवन में जितने महान् थे, व्यक्तिगत जीवन में उससे कहीं दिव्य थे। हजारों आदमियों को उनमें एक कर्तव्यनिरत और प्रेमल पिता के दर्शन हुए हैं। दैनिक जीवन में नीति का पालन वे जिस सूक्ष्मता से करते थे वह उनके निकट रहनेवाले लोग ही जानते हैं। वह जिनसे प्यार करते थे उनका कितना ध्यान, अपने कर्म-संकुल जीवन में भी, रखते थे, इसे जानकर अत्यधिक आश्चर्य होता है। इसीलिए उनके जीवन की दिव्यता का अनुभव उनके निकट रहकर ही किया जा सकता था।

परन्तु सबके लिए यह सम्भव नहीं। उनके निजी जीवन के दर्शन उनके निजी पत्रों से दूर-दूर रहने वाले लोग भी कदाचित् कुछ पा सकते हैं। इसीलिए 'अमृतवाणी' का प्रकाशन किया जा रहा है। इसमें गांधीजी के लिखे हुए अत्यन्त निजी पत्रों का संग्रह है। ये पत्र गांधीजी ने एक आश्रमवासिनी सुशिक्षित महिला को गुजराती में लिखे थे। जब ये पत्र लिखे गए थे तब गांधीजी को कल्पना भी न थी कि कभी इनको प्रकाशित किया जायगा। इसलिए पत्रों में अत्यन्त स्वाभाविकता है। ये अत्यन्त संक्षेप में लिखे गए हैं इसलिए इनमें केवल सूत्र रूप में सिद्धान्तों की व्याख्या मिलती है। सुन्दर और दिलचस्प बातों से ये पत्र भरे हुए हैं। इनमें अत्यन्त निजी और धार्मिक चर्चाएँ हैं। इनमें रोज की वे सभी

अनावृत जीवन को और भी अनावृत कर दिया है। अपनी दुर्बलताओं को मुक्त कंठ से स्वीकार किया है, बार बार भक्त और साधक की नम्रता के साथ घोषणा की है कि मेरे पास कुछ नया नहीं है; जो है वह अति प्रचलित है, शाश्वत है और जो कुछ शक्ति मुझमें दिखाई देती है मेरी नहीं प्रभु की शक्ति है। गांधीजी जैसे महापुरुष का सौन्दर्य यही है। अपने मर्मस्थल को उघाड़ कर सबको दिखाने में वे कभी कुंठित नहीं हुए, और जिसे ठीक समझते थे उसके लिए मित्र का विरोध भी उन्हें डिगा नहीं सकता था। जिस व्यक्ति को ये पत्र लिखे गए थे सौभाग्यवश वह भी एक सत्याग्रही महिला हैं। उन्होंने देखा दूसरों का भी इन पत्रों से बहुत कल्याण हो सकता है और बहुत से लोग इनके द्वारा गांधीजी के जीवन की झाँकी प्राप्त कर सकते हैं इसलिए उन्होंने आचार्य कालेलकर से सम्पादित कराकर इन्हें मराठी में 'बापसत्याची प्रसाद-दीक्षा' के नाम से प्रकाशित कराया।

निजी पत्रों में की गई चर्चा, कितनी भी विस्तृत या संक्षिप्त क्यों न हो, वह किसी वस्तु निबन्ध का रूप धारण नहीं कर सकती। उसमें पूर्णता नहीं होती, संकेत होते हैं। उन्हें समझने के लिए हमें पत्र-लेखक और जिसे पत्र लिखा गया है दोनों के समान तल पर खड़ा होना पड़ेगा। उस तल पर बिना पहुँचे हुए हम एकाएक उस पवित्र वातावरण का आनन्द नहीं उठा सकते। कोई हमारे लिए अपने अन्तःकरण के द्वार खोल दे और हम उस अन्तःकरण की परख में असमर्थ होकर उसकी पवित्रता और कोमलता को नम्रता और कठोरता समझकर भूल करें तो उसके प्रति अन्याय ही होगा। मुझे आशा है, हिन्दी पाठक ऐसी अनुदारता न दिखायेंगे।

मैंने कई वर्ष पूर्व इन पत्रों को पढ़ा था। तभी मैंने निश्चय कर लिया था कि इन्हें हिन्दी पाठकों के सामने रखूँगा। दिन बीतते गये और कार्यव्यस्तता के कारण मुझे अनुवाद का अवसर न मिला। १९४२-४३ की घटनाओं को देखकर गांधीजी विषयक विवेकपूर्ण साहित्य के प्रकाशन की इच्छा और बलवती हुई। ठीक अवकाश में मैंने 'गांधी-वाणी' तैयार करके प्रकाशित की। समयाभाव वश 'साहित्यरत्न' श्री गया का इन्दुरत्न से मैंने इन पत्रों का मराठी से अनुवाद कराया। बाद में मूल से इन्हें मिलाकर सम्पादन और प्रामाणिक संशोधन के पश्चात् इसे प्रकाशित किया जा रहा है।

गांधीजी तथा उनके विचारों के प्रसार के सम्बन्ध में, साधना-सदन प्रयत्नशील है। हमारी इच्छा और चेष्टा गांधीजी के विचारों के प्रामाणिक संस्करण तथा उनके सम्बन्ध में प्रामाणिक व्याख्या उपस्थित करने की रही है और आज भी है। युद्ध-जर्जर विश्व के लिए उनका सन्देश महान् और आशाप्रद है। इसीलिए हम अपनी तुच्छ शक्ति के अनुसार, थोड़ा-बहुत कार्य प्रभु की कृपा से इस दिशा में करते जा रहे हैं।

मुझे यह आशा है 'अमृतवाणी' से जीवन निर्माण में लगे हुए बंधुओं को कुछ न कुछ प्रकाश मिलेगा।

—श्री रामनाथ 'सुमन'

विषयानुक्रमणिका

विषय — पत्रांक

संकेत-चिह्नों का स्पष्टीकरण

० व्यक्ति-विशेष जिसका नाम नहीं दिया गया है।

— पत्रांश या जोड़ दिया गया है।

अमृतवाणी

[पत्र—१]

मूर्ति-पूजा : तृष्णा : कर्तव्य-कर्म : सहजप्राप्त सेवा : समाधि

चि०— तुझे आवश्यकता हो तो खड़ाऊँ जरूर रख ले। किन्तु ये लकड़ी के टुकड़े रखकर तू क्या करेगी? तेरा शरीर उससे या दीप बढ़ता हो तो अवश्य रख ले। मैं तो इस वृत्ति को मूर्ति-पूजा समझकर नापसन्द करूँगा। अपने पिता की फोटो मैं अपने पास रखता था। (दक्षिण-अफ्रिका में मैं यह फोटो अपने दफ्तर में बैठक में और अपने सोने के कमरे में रखा करता था। मेरे पास एक चेन थी। उसमें लॉकेट लगा हुआ था। उसमें पिता की और मेरे बड़े भाई की फोटो रहती। आज मैंने यह सब छोड़ दिया है। इसका अर्थ यह नहीं कि मैं उन्हें अब कम पूज्य समझता हूँ। आज तो वे मेरे हृदय में अधिक अंकित हो गये हैं। उनके गुणों का स्मरण कर उनके अनुकरण का प्रयत्न करता हूँ। और ऐसी भक्ति मैं असंख्य देवताओं की कर सकता हूँ। पर यदि मैं उनकी मूर्तियाँ पास रखने लगा तो मेरे पास जगह बाकी न बचेगी। और उनकी खड़ाऊँ इत्यादि रखने लगा तो मुझे और भी जमीन की मिलकियत स्वीकार करनी पड़ेगी। अतः मेरे अनुभवों की सलाह तुझे यह है कि मेरे जितने उचित कदम पड़ रहे हैं उन पर कदम रख कर तू चल। मेरी खड़ाऊँ सँभालने से यह लाख दर्जे अच्छा है। और यह देखकर किसी ने उसकी नकल की तो कुछ बिगड़ता नहीं। किन्तु तेरे पास खड़ाऊँ देखकर कोई उसका अन्धानुकरण करने लगे तो वह गड्ढे में ही गिरेगा न? इतना समझकर फिर 'यथेच्छसि तथा कुरु'।

जो कर्तव्य-कर्म समझ लेता है और उसके अनुसार आचरण करता है उसकी तृष्णा नष्ट ही हो जाती है। जिसकी तृष्णा मरी नहीं उसे अपने कर्तव्य कर्म का ध्यान नहीं रहता। तृष्णा-रोग इतना ऊँचा है कि उसे कोई सौंप नहीं सकता। उसे मिटाये बिना काम नहीं चल सकता। तृष्णा के त्याग का अर्थ ही है कर्तव्य का ध्यान। मैं जानता हूँ कि मुझे

काशी जाना है। वहाँ जाने का रास्ता भी मालूम है। किन्तु मुझे कौन सी तृष्णा उस मार्ग से—कर्तव्य से पराङ्मुख कर सकेगी। मेरी तृष्णा 'काशी के मार्ग से जाना' नहीं है; और वह पूरी हुई। फिर बचा क्या! सहज प्राप्त सेवा सामने है। यदि तू उसे एक-निष्ठ धर्म कर करेगी तो उसमें पूर्ण सन्तोष प्राप्त होना ही चाहिए। उस सिलसिले में जितना ज्ञान हो जो पढ़ने को मिले वही प्राप्त है। उसे छोड़कर दूसरे का विचार भी मन में नहीं आना चाहिए। यही मेरी दृष्टि में योगः कर्मसु कौशलम्, समत्व और समाधि है। किन्तु यदि यह बात तुझे अज्ञान-सी लगे और तेरी आत्मा को वाचन आदि की आवश्यकता हो तो तू उस इच्छा को प्रसन्नतापूर्वक तृप्त कर सकती है।

काम का बोझ कम करो। और थोड़ा विश्राम किया करो। पर किस प्रकार होगा यह तुम और मिल कर तय करो। दूरदर्शी हैं धैर्यशाली हैं और चारित्र्य हैं। ये तुझे अवश्य सहायता करेंगे। मेरी तरह के लोग कुछ बातों में मार्ग अवश्य सुझा सकते हैं। किन्तु तेरी और अपनी सब की शान्ति का आधार अपने पर ही है।

पंडितजी का संगीत सुनने के पश्चात् तुझे दूसरा संगीत पसन्द न आयेगा यह मैं जानता हूँ। किन्तु तू स्वयं भजन क्यों नहीं शुरू करती? तुझे संगीत आता है यह तो सच है।

ता २—१ —१ बापू के आशीर्वाद

यरवदा मन्दिर

[पत्र—२]

प्रेम-भाव

चि॰ — तेरा पत्र मुझे मिला। लम्बा-चौड़ा उत्तर लिखा, इसमें कोई हर्ज नहीं। काम में लगे लिखने में एक ही पंक्ति लिखी तो भी बापू को सन्तोष मानना चाहिए। किन्तु उसमें अपना हृदय पूरी तरह खोल देना चाहिए।

मेरे जाल में जो कोई आते हैं, मैं उन्हें फँसा रखना चाहता हूँ, यह बात एकदम सत्य है। किसी के जाल में फँसने के कारण अपना सर्वनाश होने की आशंका रहती है। मेरे जाल में फँसे किसी का भी सर्वनाश हुआ हो मुझे ज्ञात नहीं। अतः मैंने अपना व्यवसाय जारी रक्खा है।

ता० १६—१—२६ बापू के आशीर्वाद

आगरा

[पत्र—२]

पिंजड़ा और आश्रम

चि — तुझे लिखने में मुझे तकलीफ नहीं होती। तेरा अनुमान सच है। हिन्दुस्तान की समस्याएँ सुलझाने में मुझे जितनी मिठास मालूम होती है उससे भी अधिक आश्रम की समस्याएँ सुलझाने में, उनमें भी विशेषतः बहिनों की समस्याएँ सुलझाने में मालूम होती है। क्योंकि वही समस्याएँ सुलझाने की कुञ्जी उसी में है। जो पिंजड़ा में वही आश्रम में है। आश्रम समझने में आदमी भूल कर सकता है। पिंजड़ा हाथ में ही रहता है।

मालूम होता है कि शिशु-वर्ग की व्यवस्था अच्छी होने लगी है।.... ....कथा करेला वाले की सिफारिश मैंने जान-बूझ कर किसी मतलब से की है.......।

भावना सीधे रास्ते जा सकती है। उसे मार्ग से ले जाना ही परम-धर्म है। पुरुषार्थ शब्द एकांगी है। मुझे कोई दूसरा उत्तम शब्द सूझता है।

ता १८—१—१ बापू के आशीर्वाद

यरवदा मन्दिर

[पत्र—४]

निद्रावस्था जाग्रतावस्था का दर्पण है।

चि — निर्दोष नींद आने के लिए जाग्रतावस्था में आचार-विचार निर्दोष होने चाहिएं। निद्रावस्था जाग्रतावस्था की स्थिति जाँचने का एक [illegible] है। भावनाएं गलत मार्ग से चलने लगें तो उन्हें रोक रखने की शक्ति हम सब में होती है। यह उत्कृष्ट धर्म है। ऐसे प्रसंगों में पराजय को स्थान ही नहीं है।

आज मेह मालूम हुआ आकाश में बादल रहते हैं। किन्तु वर्षा का प्रमाण बहुत कम है। अहमदाबाद की सामान्य वर्षा से भी बहुत कम, ऐसा नहीं कहा जा सकता। बहिनों को मैं पत्र न लिखूँ ऐसा संकेत मिला है।   को पत्र लिखते समय मेरे आशीर्वाद लिखकर यह बात सुझाना।

ता २८—८—१   बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

[पत्र—५]

मूर्ति पूजा का मर्म

चि — मूर्ति-पूजा के मैं दो अर्थ करता हूँ। एक मूर्ति-पूजा के द्वारा मनुष्य मूर्ति का ध्यान करते करते उसके गुणों में लीन हो जाता है—यह पूजा अभीष्ट है। दूसरी में गुणों का विचार न कर मूर्ति को ही मूल वस्तु समझता है यह बुतपरस्ती है अनिष्टकारी है।

ता १८—१ —१   बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

[पत्र—६]

उपवास का चमत्कार

चि०— तेरा पत्र मिला।..........मैं अपने उपचारों से ही चिपटा रहता हूँ। डाक्टर का बताया हुआ उपचार चाहो बाद में करो। किन्तु कम से कम सात दिन का उपवास कर डालो। इसमें अनशन से डर लेना ही नहीं चाहिए। सात दिन के अनशन में बहुत से काम तू करती रह सकेगी। जीवन में पहली बार ही जब मैंने बहुत दिनों का उपवास किया तो एक दिन का भी विश्राम न लिया। और हानि भी नहीं हुई। वह उपवास ७ दिन का था। उस समय शरीर में थोड़ी-बहुत चर्बी भी थी। जिसके शरीर में चर्बी का संग्रह न होगा उसे ही उपवास में पड़ा रहना पड़ता है। दो दिन के पश्चात् तो तुझे अधिक शक्ति प्रतीत होने लगेगी। यह सच है कि पहिले दो दिन झूठी भूख लगी-सी मालूम होगी किन्तु पीछे भूख ही नहीं लगती। अन्त में जब खून साफ हो जाता है तभी भूख लगती है। इस बीच एनिमा लेकर पेट साफ रखना चाहिए। एनिमा (पिचकारी) लेने के बाद सर्वांगासन करने से पानी ऊपर की अँतड़ियों को भी मिलता है। किन्तु तुझे उसकी जानकारी न हो तो छोड़ दे। उपवास-काल में पानी में नमक और सोडा डाल कर खूब पीना चाहिए। हर आठ औंस में पाँच ग्रेन नमक और दस-ग्रेन सोडा, इस प्रकार आठ गिलास आसानी से लिये जा सकते हैं। धूप में बैठना चाहिए। किसी प्रकार का संकोच न करके तू इतना कर, ऐसी मेरी इच्छा है। चाहे तो डाक्टर को सूचित कर दे। वे भी यह उपचार पसन्द करेंगे। अब बहुत से डाक्टरों को उपवास का चमत्कार मालूम होने लगा है।

ता० १५—११—१ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—७]

प्रार्थना : सिपाही का कर्तव्य

चि —, जो निर्णय मैं करता हूँ उसके सब कारण मेरे ध्यान में हमेशा रहते हैं यह बात नहीं। तू सभी सिपाही निकली—वहाँ रहने से सिपाहीपन नहीं होता ऐसा तुझे प्रतीत होता हो तो यह गलत है। सभी सिपाही मोर्चे पर ही रहेंगे यह बात नहीं। बहुत से सिपाही सुरक्षित रक्खे जाते हैं। और केन्द्र स्थान पर भी जिम्मेदार आदमियों की आवश्यकता होती है। जोखिम का डर छोड़ देना आवश्यक है। संकट आने पर उसका अवश्य सामना करना है। किन्तु जो मनुष्य अकारण संकट की ओर दौड़ता है वह सिपाही नहीं मूर्ख है। सच्चा सिपाहीपन ईश्वर जैसे रक्खे वैसे रहने में है। उसमें अनासक्ति है। यह बात व्यावहारिक भाषा में कहना हो तो इसका अर्थ यह हुआ कि जिस सेनापति के नीचे हम विचार कर अपनी इच्छा से रहे वह जो कहे हमें करना है—यह पाठ तूने पक्का किया है।

...गीता-पारायण के सम्बन्ध में तेरे विचार मालूम हुए। काका साहब से पेट भर बात समझ लो। किन्तु मुझे मालूम होता है कि तेरे दिमाग की तह में प्रार्थना के सम्बन्ध में तेरी अरुचि अथवा अश्रद्धा नहीं है। तेरा चले तो तू केवल रामनाम की ध्वनि पर ही चला लेगी। मेरी सलाह है कि प्रार्थना की सब विधियों में श्रद्धा रक्खो। पीछे तो अर्थ पर ध्यान दो। वेद म न्त्र बने तो वे शब्द संस्कारी हैं उनके सुनने में भी हित है ऐसी श्रद्धा रखकर नम्रता से सुनो। इसका अर्थ यह मत करना कि मैं किसी तरह रात दिन के गीता-पारायण पर ले जाना चाहता हूँ? जिस प्रार्थना की तह में अनेक लोगों द्वारा अखण्ड श्रद्धापूर्वक की गई १५ साल की तपस्या है उस प्रार्थना में कुछ तो होना चाहिए, इतना ही तेरे मन पर जमाने के लिए लिखा है।

ता २४—११—१ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मन्दिर

[पत्र—८]

उपवास : शिक्षा-ताड़ना : नींद

चि०— तेरा पत्र पढ़कर मुझे बहुत आनन्द हुआ। आज तेरा उपवास समाप्त हुए दो दिन बीते। यह पत्र जब तेरे हाथ पहुँचेगा तब तक तो उपवास भूल गया होगा और तुझे नूतन स्वास्थ्य का अनुभव होता होगा। ऐसा अनुभव न हुआ तो उपवास अधूरा रहा यही मैं कहूँगा। परिणाम मुझे विस्तार से लिखा ही होगा। तेरा अनुभव दूसरों के काम आना चाहिए। उपवास कैसे छोड़ना, यह तुझे मालूम ही है। उपवास के बाद भूख बहुत लगती है। किन्तु उस तरह पेट न भरना चाहिए। खूब धीरे-धीरे बढ़ाते जाना। चटर-पटर चीजें नहीं खानी चाहिएँ। रसीले फल खाने चाहिएँ। उसमें कंजूसी मत करना। शरीर स्वस्थ होना चाहिए। उपवास करते समय काम बराबर कर सकी इसका मुझे आश्चर्य नहीं। कई एक को मैंने वैसा करते देखा है। मेरा अपना अनुभव मेरे पास है ही। जिनके शरीर में बहुत से रोग हैं उन्हें तो उपवास में अधिक शक्ति प्रतीत होती है। तेज तो अधिक आता ही है।

तेरे शिक्षक   की शिकायत है। तू बच्चों को मारती है। डंडे का भी प्रयोग करती है। ऐसी बात हो तो यह आदत छोड़ दे। बच्चों को कभी न मारना चाहिए। मासी लिखित 'अमलसमल शिक्षक' पुस्तक अपने संग्रह में है। उसे उलट-पुलट कर देखो। मारने से बच्चे सुधरते नहीं—यह अब सिद्ध हो चुका है। मैं जानता हूँ कि जिसे मार-मार कर सिखाने की आदत पड़ी है उसे यह कठिन लगेगा। किन्तु यह तो किसी बन्दूकधारी सिपाही के अनुभव की तरह हुआ। उसे यही मालूम होता है कि गोली के बिना संसार में कोई काम नहीं हो सकता। पर हो सकता है, यही सिद्ध करने के लिए तो हम लगे हैं। वैसे ही बच्चों का समझो......

......पूरी नींद लेनी चाहिए। मनुष्य को आहार की अपेक्षा नींद की अधिक आवश्यकता है। आहार के उपवास से लाभ होता है किन्तु नींद

का उपवास शरीर को क्षीण कर देता है, मस्तिष्क को पागल-सा बनाता है और अस्वस्थ कर देता है। अतः नींद के सम्बन्ध में लापरवाह मत रहो— रात के नौ से चार तक गाढ़ी नींद ले सको तो फिर मेरी कोई शिकायत नहीं।

ता १—११—१   बापू के आशीर्वाद

[पत्र—९]

बच्चों की ताड़ना

चि०—तेरा पत्र मिला। बच्चों की शिक्षा के सम्बन्ध में मालूम हुआ। तेरा तर्क पुराना है। यह दूषित तर्क है। तू मार खाने से सुधरी अतः तुझे मारना चाहिए। बड़े होने पर बच्चे भी यही सीखेंगे। ठीक यह तर्क कर लोग हिंसा को स्वीकार करते हैं। इस झूठे अनुभव के आगे बढ़ना अपना काम है। उसके लिए धीरज चाहिए। यह मुझे स्वीकार है। यही धीरज अपने में लाने के लिए हम लोग इकट्ठा हुए हैं। बच्चों को पढ़ाना अथवा उन्हें अनुशासन में लाना यह ध्येय नहीं उन्हें चरित्रवान बनाना यह ध्येय है। और इसी के लिए शिक्षण अनुशासन इत्यादि सब कुछ है। चरित्र बनाते समय अनुशासन की ओर ध्यान न रहा, शिक्षण अलग रह गया तो रह जाने दे। तेरा कहना मैं समझता हूँ, तेरे ताड़न में द्वेष नहीं यह भी मुझे ज्ञात है। फिर भी उस ताड़ना में रोष और अधीरता तो है ही। तुझे एक सूचना देता हूँ। बच्चों की सभा कर। जो यह कहें कि 'यदि हम कुछ भूल करें और आज्ञा न पालें तो हमें मारो और इस प्रकार मारो' उन्हें मारो जैसे कहें वैसे मारो। जो नहीं कहें उन्हें मत मारो। ऐसा करने से तुझे दिखाई देगा कि मारने की आवश्यकता ही नहीं है। इस विषय की चर्चा करती रह। अधीरता अथवा निराशा से छोड़ मत दे। मेरा कहा जब तक तेरे मन में जमता नहीं तब तक तू अपने रास्ते चल। मैं जानता हूँ कि तू सत्य की पूजा करने वाली है। अतः अन्त में तुझे सत्य मिलेगा ही।

ता १४—११—१   बापू के आशीर्वाद

[पत्र—१०]

ईश्वर की सत्ता : प्रार्थना

चि०—, तू ही वह लड़की है ऐसी कल्पना कर प्रार्थना के सम्बन्ध में तेरे प्रश्नों का उत्तर देता हूँ। जैसे हमें उत्पन्न करने वाले माँ-बाप होते हैं वैसे ही उन्हें उत्पन्न करने वाले उनके—इस प्रकार ऊपर बढ़ते-बढ़ते जिस निर्माता की हम कल्पना कर सकते हैं वही ईश्वर है। और इसलिए उसका दूसरा नाम 'सर्जनहार' है। और जिस तरह अपने माँ-बाप को कई बार अपनी इच्छाएँ बिना बताये मालूम हो जाती हैं उसी तरह ईश्वर के बारे में भी समझना चाहिए। यदि माँ बाप में इतना जानने की शक्ति होती है तो समस्त प्राणियों के बनाने वाले में अपना अन्तःकरण समझने की खूब शक्ति होनी चाहिए। अतः ईश्वर को हम अन्तर्यामी कहकर भी पुकारते हैं। उसे प्रत्यक्ष देख सकें यह कुछ आवश्यक नहीं। अपने बहुत से रिश्तेदारों को हम आँखों से देखा नहीं होता। किसी के माँ बाप विदेश गये हों अथवा मर चुके हों तो भी वे हैं या थे यह दूसरों पर श्रद्धा रख कर हम मानते हैं। उसी तरह ईश्वर के सम्बन्ध में अपने पास सन्तों की गवाही है। उस पर विश्वास रखकर हमें समझना चाहिए कि अन्तर्यामी है ही। और यदि वह है तो उसका भजन करना उसकी प्रार्थना करना, यह बात तो आसानी से समझ में आ सकती है। हम यदि गुणवान हैं तो माँ-बाप को सवेरे उठते ही और रात को सोते समय साष्टांग प्रणाम करते हैं। उसी प्रकार ईश्वर को भी करना चाहिए। और जिस प्रकार हम अपनी इच्छाएं माँ-बाप को बताते हैं उसी प्रकार ईश्वर से भी बतानी चाहिए। आज इतना ही बस है न ! ....

इसमें से यदि कुछ मन में न बैठे तो ऐसा लिखने में संकोच मत करना।•

ता० ११—११—३ बापू के आशीर्वाद

• 'बच्चों को प्रार्थना अच्छी मालूम हो ऐसा कोई व्यावहारिक उदाहरण भेजिए', इस प्रश्न के उत्तर में यह पत्र लिखा गया है।

[पत्र—११]

बच्चों की शिक्षा

चि०— मन जब खाली होता है तब मैं लड़कों के बारे में सोचता हूँ। दिसम्बर की २१ तारीख सबसे छोटी क्यों? यह बच्चों को मालूम न होगा। यह समझाते समय भूगोल-खगोल का थोड़ा-सा ज्ञान आसानी से दिया जा सकता है। क्या तुमसे यह न करते बनेगा? छोटे दिन के बारे में समझाते समय बड़े और बराबर दिनों के बारे में भी जानकारी दे। उसी के साथ ऋतुओं के परिवर्तन के संबंध में भी। विषुवत क्या है? यह भी बता। इस प्रकार की प्रत्यक्ष मार्मिक चीजों में दोनों को ही मिठास का अनुभव होना चाहिए। इसी प्रकार पहाड़े और जबानी हिसाब की देशी पद्धति है। बच्चों का यह भी खेलते खेलते सिखाई जा सकती है। इस प्रकार विचार करते-करते सामान्य वनस्पतिशास्त्र भी ध्यान में आ जाता है। मैं उसमें मंद हूँ। तुझे कदाचित् उसका कुछ ज्ञान होगा। न हो तो उस संबंध का सामान्य ज्ञान मालूम कर बच्चों को देना और मुझे भी डाक-द्वारा देना। लड़कों का और मेरा काम बन जायगा। ऐसा यदि कुछ कर सकी तो करो। लड़कों को जो चाहिए वह हम लोग नहीं देते हैं मुझे ऐसा हमेशा मालूम देता है। सहज प्रयत्नों से जो दे सकते हैं उसे तो दें।

ता० १—१—११ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—१२]

शास्त्री और भक्त शिक्षा और संस्कारिता

चि० — तेरा पत्र मिला। मेरे विचार से विवेकानन्द और का कथन यथार्थ है। जो जैसा कहता है वैसा उसके हृदय में भी प्रतीत होना चाहिए। तुलसीदास गुणगान आदि भक्तों में गुरु का एक कामी

आदि विशेषणों से सम्बोधित किया है। वह औपचारिक भाषा नहीं थी। वे हृदय के उद्गार थे। सच बात तो यह है कि अपने में दोनों भावनाएँ भरी हुई हैं। अमूर्च्छावस्था में हम स्वयं प्रभुरूप प्रतीत होते हैं। मूर्च्छितावस्था में उस दयालु के सामने हम दीन की तरह रहते हैं। जिसे हम दीन हैं ऐसा प्रतीत नहीं होता बल्कि प्रभु हम हैं, यह प्रतीत होता है वह करुणापावन भजन न गायेगा पर ऐसा करोड़ों में एक भी न मिलेगा। अपनी लघुता का दर्शन करना यह महान होने का मंत्र है। अलग गिरा हुआ समुद्र-बिन्दु अपने को समुद्र कहते कहते सूख जायगा। यह अपना बिन्दुत्व स्वीकार करेगा तो समुद्र की ओर जाने का प्रयत्न करते-करते उसमें विलीन होकर समुद्र बन जायगा।

कल्चर माने संस्कारिता एज्यूकेशन माने साहित्य-ज्ञान। साहित्य ज्ञान साधन है संस्कारिता साध्य। साहित्य ज्ञान के बिना भी संस्कारिता प्राप्त होती है। जैसे कोई बच्चा संस्कारी घर में पला हुआ हो तो उसमें संस्कार अपने आप उत्पन्न होते हैं। आज की शिक्षा और संस्कारिता इन दोनों में कम-से-कम इस देश में कोई भी मेल नहीं है। इस प्रकार की शिक्षा होने पर भी लोगों में अब भी थोड़ी-बहुत संस्कारिता बची है इससे प्रतीत होता है कि हम लोगों की संस्कारिता की जड़ बहुत गहरी है।

ता ५—१—३१ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—१२]

स्थितप्रज्ञ श्लोक : [illegible]

चि० — तेरा पत्र मिला। इसमें स्थितप्रज्ञ श्लोक के सम्बन्ध में एक बार मैंने कहा था—'[illegible]' आदि। आज मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता। जिस समय जैसी मेरी मनोवृत्ति होती है उसी तरह के श्लोक प्रिय मालूम होते हैं। ऐसे प्रश्न अब मुझे पसन्द नहीं आते। मुझे पूरी गीता प्रिय प्रतीत होती है। भाषा का कौन-सा अंश

अपना प्रभाव डाल सके ऐसे टॉलस्टाय, रस्किन, थोरो और रायचन्द माने हैं। कदाचित् थोरो को छोड़ देना ज्यादा अच्छा होगा।......

संसार में होनेवाली क्रान्तियों के कारण महापुरुष दिखाई देते हैं। वास्तव में उनके कारण खूब गौण होते हैं। क्रान्ति एकाएक नहीं होती। जिस प्रकार यह नियमित रीति से घूमते हैं वही बात क्रान्ति की भी है। किन्तु हमें वे नियम या कारण समझ में नहीं आते। अतः एकाएक एक धुआं-सा प्रतीत होता है। बस।

ता० १७—१—३१ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—१५]

मानसिक आरोग्य

चि०— तेरे दोनों पत्र मिले। कड़ुवी दवा यदि मैंने न पिलाई तो दूसरा कौन पिलायेगा? उसे पीने में ही स्वास्थ्य की रक्षा है। शरीर की अपेक्षा मानसिक आरोग्य की बहुत आवश्यकता है।

ता० ६—७—३१ बापू के आशीर्वाद

बोरसद

[पत्र—१६]

सत्याग्रह का तात्पर्य

चि० — तेरा पत्र मिला। मुझे कौन-सा भय लगा है यह तू ने नहीं लिखा। मैं स्वीकार करता हूँ कि यह मुझे मालूम होना चाहिए था किन्तु इन चीजों में मैं अज्ञान हूँ। 'दीर्घायु हो' यह कहने के बजाय मैं कहूँगा "अमीम निर्विकार, निर्भय होकर आवश्य सेविका बन।" तेरा प्रयत्न तो है ही वह सफल हो।

अपने पत्र में तू ने दोनों रंग भरे हैं। उसमें हृदय खुला है यह मुझे पसन्द है। किन्तु उसमें रोष और अभिमान भी है। मैं उसका पृथक्करण

करने नहीं बैठा हूँ ....। यदि तू अपनी नोटबुक न लिखती हो तो आज से लिखना शुरू कर दे। रोज किस पर गुस्सा उतारा (फिर वह बच्चा हो या बड़े लोग हों) किसे मारा किसे फटकारा—इतना मेरे लिए लिख दो भी बस है। बाकी तू जान और जाने। मैं तेरे काम में हस्तक्षेप नहीं करना चाहता। वह मेरे क्षेत्र के बाहर है। वह मेरी समझ में न आवेगा। मुझसे न्याय न करते बनेगा। मेरे पास वैसा साधन भी नहीं है। मैं अपना माँ-बाप बन बैठा हूँ। अतः मेरा न्याय एकांगी होगा। और सत्याग्रही न्याय नहीं माँगता। यहाँ न्याय माने 'जैसे का तैसा'। सत्याग्रह माने शठं प्रत्यपि सत्य हिंसा के विरुद्ध अहिंसा क्रोध के विरुद्ध अक्रोध अप्रेम के विरुद्ध प्रेम; इसमें न्याय तौलने के लिए कहाँ जगह है!

ता० २५—७—३१ बापू के आशीर्वाद
बारडोली

[पत्र—१७]

यूरोपीय कला बनाम भारतीय कला। आश्रम का ढाँचा सविस्तृत

चि० — तेरा पत्र मिला। तुझे चाहिए वह सब दे सकूँगा या नहीं, नहीं कह सकता।*

रोम की चित्रकला देखते समय आनन्द तो बहुत आया किन्तु वो पैसे देकर क्या सब हैं? मुझे उसमें का कुछ तो बहुत ही पसन्द आया। वहाँ मुझे दो तीन महीने रहने को मिलें तो चित्र और मूर्तियाँ खूब गौर से देखूँ—और धीरे धीरे उनका अभ्यास करूँ। क्रॉस-स्तम्भ पर की ईसा की मूर्ति मैंने देखी अधिक से अधिक मेरा मन उसी ओर आकर्षित हुआ यह मैंने पहिले लिखा हो है। किन्तु वहाँ की कला हिन्दुस्तान की अपेक्षा

---

*यूरोप कला के स्वरूप का वर्णन देने की प्रार्थना की गई थी उसी को उत्तर रूप यह लिखा गया है।

ऊँचे दर्जे की है ऐसा तो मुझे न मालूम हुआ। दोनों कलाएँ भिन्न-भिन्न प्रणाली पर विकसित हुई हैं। भारतीय कला में कल्पना भरी है, यूरोपीय कला में प्रकृति का अनुकरण है। इसलिए कदाचित् पश्चिम की कला समझने की दृष्टि से सरल होगी। किन्तु समझने के पश्चात् वह हमको पृथ्वी पर ही चिपकाकर रखने वाली होगी तो हिन्दुस्तान की जैसे-जैसे समझ में आवे वैसे-वैसे हमको ऊपर-ऊपर ले जाने वाली होगी। यह सब मुझ सरीखे को बतलाने लायक ही समझो। इन विचारों का मेरे लिए कोई मूल्य नहीं। कदाचित् हिन्दुस्तान के सम्बन्ध में मेरे हृदय में छिपा हुआ पक्षपात यह सिखाता हो। अथवा मेरा अज्ञान मुझे कल्पना के घोड़े पर बिठाता हो। किन्तु जो ऐसे घोड़े पर चढ़ेगा वह अन्त में गिरेगा या नहीं? ऐसा है तो भी मुझे इनमें से कुछ मिलता हो तो ले लो; इन बातों के पार हो गए हो तो इसे फेंक दो। अपने से कम ज्ञान वाले बच्चों को माता पिता जिस प्रकार रामायण महाभारत की कथाएँ, जैसी उन्हें आती हैं बताते हैं और बच्चों को फुसलाते हैं, वैसे ही मेरे बारे में समझो। इसमें इतना तो मुझे दिखलाई देगा कि कला में मुझे रस तो मालूम होता है किन्तु ऐसे ही कितने रसों का मैंने त्याग किया है—मुझे करना पड़ा है। सत्य की खोज में जो रस मिले उन्हें मैंने लूट कर लिया और, और मिले तो पीने के लिए तैयार हूँ। सत्य के पुजारी को अनुभूतियाँ सहजप्राप्त होती हैं। उनसे वह स्वाभावतः ही (गीता के) तीसरे अध्याय का अनुसरण करने वाला होता है। तीसरा अध्याय पढ़ने के पूर्व ही मैं कर्मयोग की साधना करने लगा था यह मैं जानता हूँ किन्तु वह तो [illegible] हुआ।

आश्रम के बारे में प्रश्न पूछा। आश्रम में उद्योग प्रधान है। क्योंकि शारीरिक उद्योग करना मनुष्य का धर्म है। जो उद्यम नहीं करता वह चोरी का अन्न खाता है। और आश्रम का उद्योग जितना पेट के लिए है उतना ही परमार्थ-साधना के लिए भी है। चर्खे को मध्य बिन्दु बनाया गया है। क्योंकि हिन्दुस्तान के करोड़ों लोगों के लिए सामान्य सहायक धन्धा दूसरा आजतक नहीं बना जा सकता है। इसमें धर्म और अर्थ दोनों ही बराबर

सँभाले जाते हैं। आश्रम का अस्तित्व केवल देश-सेवा के लिए ही नहीं, देश-सेवा के द्वारा विश्व-सेवा साधने के लिए है और विश्व-सेवा द्वारा मोक्ष प्राप्त करने के लिए, ईश्वर का दर्शन करने के लिए, है।

जो आवेगा सबको आश्रम में भरती करते न बनेगा। आश्रम पंगु भवन नहीं अनाथालय भी नहीं है। वह सेवक और सेविकाओं के लिए—साधकों के लिए—है। अतः जो शरीर से काम करने लायक न होंगे उनके लिए वह नहीं है। फिर भी जो सेवा-भाव से आर्द्र हो गये होंगे उनका शरीर पंगु होने पर भी हम उन्हें ले लेंगे। ऐसे केवल थोड़े ही लिये जा सकेंगे। किन्तु आश्रम में जो आश्रमवासी बन कर भरती हो गये होंगे वे भरती हो जाने पर पंगु हो जायें तो उन्हें हम निकाल न देंगे। बाह्य दृष्टि से देखकर आश्रम की बहुत सी कृतियों में विरोधाभास भले दिखाई दें किन्तु अन्तर्दृष्टि से जाँचने पर वह आभास दूर हो जायगा। इतने में न समझी हो तो फिर पूछना। दूसरी शंकाएँ हों तो उन्हें भी खुले दिल से मेरे सामने रखना।

विलायत में गोदी के लिए बहुत कम मैं जाता हुआ था। मैं समझता हूँ कि उसमें व्रत-भंग नहीं हुआ।

मेरे साथ रहने वाले सबको मेरी तरह ही होना चाहिए, यह बात नहीं है। यह इष्ट भी नहीं। वह नकल करने की तरह होगी। मुझमें जितना अच्छा हो और उसमें से जितना पच सके उतना ही लेने में सार है। वैसे सरदार[1] चाय पीते हैं—उन्हें कौन रोक सकता है? और चाय उनके लिए औषधि की तरह काम आती हो तो? मेरे साथ रहने वाले मेरे कुछ साथी मांसाहारी भी हैं, उसका क्या? जिन्हें चाय अनुकूल नहीं पड़ती अथवा जिन्होंने चाय की उत्पत्ति वगैरह के बारे में विचार कर चाय न पीना निश्चित किया है उन्हें न पीना चाहिए। बा

---

[1]सरदार वल्लभभाई जो उस समय महात्मा जी के साथ यरवडा में थे।

[2]स्व. कस्तूर बा गांधी जी की पत्नी।

मेरे साथ होकर भी चाय पीती है और काफ़ी भी पीती है। उसे मैं प्रेम से तैयार करके पीने के लिए भी दूँगा। वह क्यों? तेरे प्रश्न में केवल हँसी है यह मैं जानता हूँ। फिर भी इस तरह की चीज़ों में हम लोगों की समझ थोड़ी भ्रमपूर्ण होती है। और हममें थोड़ी असहिष्णुता रहती है। उसे निकालना आवश्यक है। तुममें ये दोष हैं या नहीं मैं नहीं जानता; किन्तु मेरे सम्बन्ध के विचार तू समझ ले यह अच्छा है——।

ता० २५—१—३२ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

[पत्र— १८]

विद्यापीठ बनाम आश्रम : कार्य-क्षेत्र भेद

चि०—— तेरा पत्र मिला। पुस्तकों की सन्दूक जो मैं वहाँ लाया था वह क्या वहाँ पहुँच गई? विद्यापीठ में कौन रहता है? पुस्तकें भली-भाँति सँभाल कर रखनी हैं या सब कुछ अव्यवस्थित चल रहा है? बहुत से मासिक पत्र भी सँभाल कर रखने लायक होते हैं। सच तो यह है कि पुस्तकें सम्भालने के लिए एक आदमी पूरा समय देने लायक होना चाहिए। और उसके नीचे और दो हों। अन्यथा इतनी बड़ी लाइब्रेरी हमें रखनी ही न चाहिए। यह काम विद्यापीठ का ही समझना चाहिए।

अपना यह काम नहीं। अपना काम नहीं था इसीलिए तो विद्यापीठ लाया नहीं तो आश्रम को ही विद्यापीठ बनाना होता। आश्रम का यह क्षेत्र ही नहीं। आश्रम का काम मुख्यतः आन्तरिक है विद्यापीठ का काम मुख्यतः बाह्य है—होना ही चाहिए। दोनों का उद्देश्य एक ही है। किन्तु मर्यादाएँ स्वतंत्र हैं। इसलिए आश्रम में आवश्यक हो उतनी ही पुस्तकें रखनी चाहिएँ। जितनी आवश्यकता हो पढ़ने के लिए विद्यापीठ से लाई जाएँ। किन्तु यह सब फिर से काम चले तब की बात है। आज तो सब बाढ़ में बह चला है और वह ठीक ही है। बाढ़ समाप्त होने पर विशुद्ध और चाँदी के समान साफ़ पानी ही तो रहता है।

नागपञ्चमी के उत्सव की मुझे याद है। मैंने उस समय जो उत्तर दिया था वह आज भी कायम है। घर फूंकने के लिए मैंने पतंगे उड़ने की उपमा दी थी और जो आत्मा के गुण जानता है, वह तो अवश्य यह मान लेगा कि यदि आत्मा मरती ही नहीं तो फिर उसका घर अथवा कपड़े फटें टूटें, जलें तो भी क्या बिगड़ जायगा और वह तो सदा पूर्ण है अतः उसे नये घर-बार की कमी नहीं। ज्ञान हो गया तो उसे उसकी आवश्यकता ही नहीं। किन्तु यह सब स्वयं अनुभव का विषय है। अतः जब तक अपने घर फूंकते हैं तब तक पतंगे ही उत्तम कारण हैं—यह समझना चाहिए। किन्तु आत्मा को कहाँ का अपना और पराया यह प्रश्न मत करना। शरीर है तब तक थोड़े बहुत अंशों में अपना और पराया रहेगा यह समझकर चाहे बिना दूसरा रास्ता नहीं है। ज्यों-ज्यों स्वयं मरते जायेंगे (अहंकार नष्ट होता जायगा) त्यों-त्यों अपना और पराया का भेद टूटता जायगा। जो पराया मालूम देता है उसे मारते जायेंगे वैसे-वैसे भेद बढ़ता जायगा। यह बात जैसे-जैसे समझ में आयगी वस्तुओं की तरह बच्चे भी रास्ते पर आयेंगे। उसके लिए धैर्य की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में बच्चों का लिखा हुआ पत्र देखो।

ता ११—१—११　　　　बापू के आशीर्वाद

[पत्र—१६]

जीवन के विरोधाभास : द्वेष बनाम प्रेम

चि०— तेरा पत्र पहुँचा।

सरदार जी ने तमाम चाय छोड़ दी है। सवेरे की तो छोड़ ही दी थी, यह तुझे मालूम था। किन्तु दस बजे पीते थे। अब वह भी छोड़ दी है। मुझे छोड़ने पर पता लगा। मैंने एक भी शब्द नहीं कहा उन्होंने

*अनुवादक का शब्द।

अपनी इच्छा से ही छोड़ दिया।............विरोधाभास का ऐसा है। मेरे अथवा आश्रम के जीवन में जहाँ विरोध का आभास मालूम होता है वहाँ मेल दिखाया जा सकता है। जाड़े में ओढ़ने वाले और गर्मी में खुला शरीर रखने वाले के जीवन में विरोधाभास स्पष्ट दिखाई देता है। विरोध के ऐसे कितने ही आभासों का मेल बैठाया जा सकता है। और विरोध तो विरोध ही है। उनका कारण आश्रम की अथवा मेरी दुर्बलता है। इन विरोधों की गणना दोषों में ही करनी चाहिए और इन्हें दूर करने का यत्न होना चाहिए। कौन से विरोध में कारण दोष कहे जायेंगे और कौन से केवल आभास हैं यह भेद करने जायें तब समझ में आयेगा। उन्हें जो विरोध मालूम हुए हों उनके बारे में पूछना चाहो तो पूछो।

द्वेष के लिए कोई कारण हुए बिना कोई द्वेष नहीं करता; अत अपने को किसी ने द्वेष का कारण दिया तो भी उसका द्वेष न कर उस पर प्रेम करना चाहिए। उस पर रहम कर उसकी सेवा करना यही अहिंसा है। प्रेमी मनुष्य पर प्रेम करने में अहिंसा नहीं; यह तो व्यवहार है। अहिंसा का ज्ञान कहा जा सकता है। प्रेम के बदले में प्रेम करना—यह कर्ज चुकाने की तरह है।

ता १—२—३२ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

(पत्र—२०)

विद्यापीठ : आश्रम : मेरी जीवन-दृष्टि : मानसिक संयम

चि — तेरा पत्र मिला। पत्र देर से मिले तब उस पर की मुहर देखकर मुझे तारीख लिख भेजना।

किशन को कितनी सजा हुई! कहाँ रक्खी गई है!

....

............आश्रम का शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं; यह अर्थ तूने मेरे

किस मार्ग से निकाला ? मेरे मन में जो है वह यह है अक्षर ज्ञान की बाहरी शिक्षा को आश्रम में गौण स्थान है। इसीलिए यह विद्यापीठ न बन सका। किन्तु बाहरी शिक्षा की उपयुक्तता आवश्यक है ही, इसीलिए विद्यापीठ का आविर्भाव हुआ। दोनों एक दूसरे की पूर्ति के लिए हैं। ऐसी क्षेत्र-मर्यादा होने के कारण आश्रम में पुस्तक-संग्रह की सीमा होनी चाहिए। विद्यापीठ के लिए सीमा होनी ही नहीं। उसकी सीमा आन्तरिक प्रयोगों के सम्बन्ध में बंधी हुई है। आश्रम का नाम फैल गया। उसके बारे में कितने ही अतिरेक-पूर्ण विचार फैल गये। अतः उसे भेंट-स्वरूप विभिन्न प्रकार की तथा विभिन्न भाषाओं की पुस्तकें आती हैं। उन सब को रखने का स्थान विद्यापीठ ही हो सकता है। आश्रम में तो जो अध्ययन हम करते हैं उसके लिए आवश्यक पुस्तकें ही होनी चाहिए। वे कौन सी हों इसे तू और दूसरे लोग आसानी से बता सकेंगे। निर्णय करते समय कठिनाइयाँ आवें तो मुझसे पूछ ले। मेरी समझ में कठिनाइयाँ उपस्थित होने का कारण ही नहीं है। इतने वर्षों के आश्रम के अस्तित्व के अनन्तर हमें सामान्यतः कौन सी पुस्तकों की आवश्यकता है —यह तुरन्त बताया जा सकता है। उन्हें छोड़ और की हमें आवश्यकता हो तो हम विद्यापीठ के ग्रन्थ भंडार का आश्रय ले सकेंगे। दोनों संस्थाएँ, अलग अलग हैं ऐसा समझने का कोई कारण नहीं। दोनों के क्षेत्र स्वतन्त्र हैं। किन्तु दोनों में साम्य बहुत है और बढ़ता जा रहा है।

किसी के सम्बन्ध में मेरा मन बंध गया हो तो मैं उसके खिलाफ कुछ न सुनूँ और कुछ न देखूँ ऐसा तो मैं जान-बूझ कर कभी नहीं करता। सुनता हमेशा हूँ किन्तु इससे हमेशा विचार बदले नहीं जाते। अवलोकन के पश्चात् बना हुआ विचार तुरन्त बदलना मैं दोष समझता हूँ। कभी विचार न बदलना दूर हुआ अतः यह भी दोष है। विचार बदलने के लिए कुछ तो न न कारण होने चाहिएँ। कई बार तो मुझे प्रत्यक्ष प्रमाण की आवश्यकता प्रतीत होता है। यह स्वभाव मैंने कायम रखा है। और उसके कारण मैं बहुत से अज्ञानी—अनिष्ट—से बचा हूँ। मेरा औरों के साथ

का पाठ सिखला रहा है। अतः जो कुछ पूछना हो खुले दिल से पूछ। ऐसा अवसर फिर न मिलेगा।

तेरा निरीक्षण ठीक है। 'यंग इंडिया' का लेखक मैं यह एक व्यक्ति, आश्रम में सबके परिचय में आने वाला मैं यह दूसरा व्यक्ति। 'यंग इंडिया' में मैं पाण्डव (सद्गुणी) बनकर बैठता हूँ; आश्रम में जैसा हूँ वैसा दिखाई देता हूँ; दिखाई दिये बिना कैसे रह सकता हूँ! और मैं ठहरा सत्य का पुजारी (उपासक)। सब जान-बूझकर दोष छिपाने का यत्न भी [illegible] मेरे हाथ से न होगा। अतः मुझमें वर्तमान कौरव (दोष) चारों ओर से बाहर निकल ही पड़ेंगे। मुझमें देवासुर संग्राम हमेशा चल ही रहा है यह तुझे तो कहा था न? किन्तु कौरव की हार हो रही है ऐसा मुझे मालूम हो रहा है। किन्तु उस सम्बन्ध में आज निश्चय से कुछ नहीं कहा जा सकता। सोलन + के कथनानुसार यह मृत्यु के पश्चात् ही कहा जा सकेगा। तथापि एक पल में भी विषापीत हुए मैंने देखे हैं। अतः मुझे किसी प्रकार का भय नहीं मालूम होता। भय करने से लाभ ही क्या?

ता० ११—२—३२ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

[पत्र—२१]

दूसरों की आलोचना; पाण्डव और मैं; [illegible] पाण्डव की [illegible]

चि० — तेरा पत्र अच्छा है। तूने दिल से लिखा, यह ठीक ही हुआ। तूने जो आलोचना की है उसका यह उत्तर है। मुझे उस सब

+सोलन एक ग्रीक तत्ववेत्ता हो गया है। उसका कथन है— "किसी भी मनुष्य के विषय में उसकी मृत्यु के पूर्व कोई राय निश्चित मत करो।"

व्यक्ति का बयान सुनना पड़ेगा तभी तो मैं उन उन उदाहरणों के सम्बन्ध में कुछ कह सकूँगा। किन्तु सामान्य रूप से मैं इतना कह सकता हूँ कि जहाँ छूट दी गई है वहाँ-वहाँ 'प्रिविलेज' का विचार किया, या आवश्यकता देखी है। जो छूट लेते हैं वे आलस्य के कारण नहीं; उनका शरीर कहो अथवा स्वभाव कहो छूट चाहता है ऐसा मुझ पर प्रभाव पड़ा है। हम किसी के न्यायाधीश नहीं हो सकते। उनके प्रयत्नों की हमें जानकारी भी न होगी। इसका यह अर्थ नहीं है कि उनमें अपूर्णता नहीं है। अपूर्णता न होती तो आश्रम में किस लिए आते? वे होंगी नहीं हैं। मैं जो करता हूँ उसे सबको करना ही चाहिए अथवा सब उसे कर सकते हैं यह समझना महादोष है। जो बोझा भीम उठाता है वह मैं उठाने लगा तो उसी घड़ी मुझे 'राम' कहना पड़ेगा। और यदि कोई मेरे पंगुत्व से ईर्ष्या करेगा तो वह उसकी गलती होगी।

लोग मुझे ठगते हैं ऐसा आरोप बहुतों ने लगाया है। कोई ठगते नहीं ऐसा तो नहीं है किन्तु बहुत से नहीं ठगते। मुझे ऐसा अनुभव मिला है कि बहुत-से लोग मेरे सामने जो आचरण रख सकते हैं बाद में वैसा नहीं रख सकते। इस कारण कितने ही मेरा त्याग भी करते हैं। ऐसा बहुत बार होता है इसलिए मुझ पर आत्मपरीक्षा-शक्ति का आरोप लगाया जाता है।

किन्तु इतने से तेरा या औरों का समाधान होने की सम्भावना कम ही है। यह मैंने अपना बचाव करने के लिए नहीं लिखा; मैंने केवल अपनी मनोदशा बताई है। किन्तु सच्ची बात यह है और यह मैं अनेक वर्षों से मान रहा हूँ कि आश्रम की कमी मेरी कमी का प्रतिबिम्ब है। मैंने बहुतों को बताया है कि मेरी परिक्षा मुझसे मिलकर न होगी। मुझसे मिलने पर मैं अच्छा भी दिखाई दूँगा मुझमें जो गुण न होंगे वे भी मुझ पर लादे जायेंगे। चूँकि मैं सत्य का पुजारी हूँ, अतः वह पूजा दूसरों की आँखें क्षण भर के लिए चौंधिया देगी। किन्तु मुझे परिक्षा के लिए मेरी अनुपस्थिति में आश्रम देखना चाहिए। उसमें दिखाई देने वाले सब दोष मेरे दोषों के ही प्रतिबिम्ब हैं ऐसा समझने में जरा भी गलती न

होगी मुझ पर अन्याय न होगा। जो समूह आश्रम में एकत्र हुआ है उसे मैं ही खींच कर लाया हूँ, ऐसा ही कहना चाहिए। और वे मनुष्य आश्रम में रहकर भी अपने दोष न दूर कर सके होंगे अथवा सब मिलकर दोष बढ़े होंगे तो उसमें उनका दोष नहीं मेरा है। इसमें मेरी साधना की कमी है। ऐसी कमी मैं देखता नहीं अथवा मेरी समझ में नहीं आती ऐसी बात भी नहीं है। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि जो कमी है वह प्रयत्न करने पर भी बनी हुई है। और मैं प्रयत्नशील हूँ इसलिए कुल मिलाकर आश्रम का पतन नहीं हुआ, ऐसी मुझे प्रतीति है। जिन तीन स्थानों पर आश्रम खोले गये उन स्थानों पर उनके तात्कालिक हेतु सफल हुए दिखाई दिये हैं इसका मुझे स्वयं आश्वासन है। किन्तु इस आश्वासन से भी मैं अपने को अथवा दूसरे किसी को ठग लूँगा यह बात नहीं। मुझे जाना तो है बहुत दूर—रास्ते पर्वत-घाटियाँ भरी पड़ी हैं। फिर भी यात्रा तो पूरी करनी ही चाहिए। और सत्य की खोज में असफलता को स्थान ही नहीं इस ज्ञान से मैं निश्चिन्त हूँ।

आश्रम में विद्वत्समाज को आकृष्ट न कर सका, यह सच है। कारण मैं अपने को विद्वान नहीं समझता। और जो मुट्ठी भर विद्वान आश्रम की ओर खींच लाये गये हैं वे विद्या बढ़ाने के लिए नहीं बल्कि कुछ और लाभ के लिए—बढ़ाने के लिए इकट्ठे हुए हैं। ये सब सत्य की खोज में हैं और सत्य की खोज तो चाहे अपढ़ भी करें, बच्चे करें, बूढ़े करें, स्त्री करें पुरुष करें। अक्षर ज्ञान कई बार हिरण्मय पात्र का काम करता है और सत्य का मुँह ढक देता है।

ऐसा कहकर मैं अक्षर ज्ञान की कुछ निन्दा नहीं करता उसे उसका योग्य स्थान देता हूँ।

आश्रम में प्रार्थना मुख्यतः संस्कृत में पसन्द की गई है। क्योंकि आश्रम में मुख्यतः हिन्दुओं का समूह आया है। दूसरी प्रार्थनाओं का द्वेष नहीं। कभी-कभी हम उन्हें करते ही हैं न! बहुत से हिन्दुओं के बजाय यदि बहुत से मुसलमान आयें तो कुरानशरीफ ही पढ़ा जायगा

और मैं भी उसमें मग्न रहूँगा। इसमें क्या तुझे कुछ उत्तर मिलता है? सन्तोष होता है? न होता हो तो फिर पूछना। मैं न थकूँगा। तुझे संतोष हो यही इच्छा है। तू मत थक।

ता० १६—१—३२ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

[पत्र—२२]

मीरा के विषय में। अपनी अल्पता। सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्।

चि०—— तेरा पत्र मिला। तू मुझसे हृदय को हिला देने वाले एक-एक वचन चाहती है। मेरे पास यदि खजाना होता तो उसे खोलकर उसमें से मोती उठाकर मैं तुझे कुछ न कुछ भेजता गया होता। किन्तु मेरे पास वैसा कुछ भी नहीं है। जो वचन निकलते हैं वे अपने आप निकलते हैं और जो अपने आप निकलते हैं वे ही सच हैं—क्योंकि उन्हें ही जीवित वचन कहना चाहिए। दूसरे वचन कृत्रिम होते हैं। वे सुन्दर मालूम हों तो भी उनका परिणाम स्थिर नहीं रहता, ऐसा मैं समझता हूँ। मेरे द्वारा कृत्रिम-जैसा कुछ हो ही नहीं सकता। विद्यालय में अध्ययन करते समय दो बार ऐसा प्रयत्न किया और दोनों बार विफल हुआ। उसके पश्चात् वैसा प्रयत्न किया ही नहीं।

और जैसा मेरे वचनों के सम्बन्ध में है वैसा ही मेरे बारे में जो-जो अनुभव तूने लिखे हैं उस सम्बन्ध में भी समझ। मीरा बाई के बारे में हमने जो कहा था उसकी तुझे याद है। उस समय जैसा मुझे सूझा होगा, मैंने उत्तर दिया होगा। उस उत्तर की छाप तुझपर अच्छी नहीं पड़ी यह मैं समझ सकता हूँ। यह मेरी अहिंसा की कमी है। उस समय मुझे जैसा सूझा वैसा मैंने बतलाया होगा। किन्तु उसमें तुझे दंश दिखाई देना भी संभव है। 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्' यह केवल व्यवहार वचन नहीं सिद्धान्त है। प्रियम् का अर्थ अहिंसक है। मैंने तुझे जो आवेश में

कहा होगा नहीं यदि मैंने नम्रता से बताया होता तो जो कटु प्रभाव उन पर पड़ गया वह न रह गया होता। धार्मिक सत्य के बारे में तो ऐसा होता है कि उस समय वह कड़ुआ मालूम होता है किन्तु वह परिणाम में उसे अमृतमय मालूम होना चाहिए। यह अहिंसा की अनिवार्य कसौटी है। यह जो लिख रहा हूँ वह स्वतः हुए कटु अनुभव से लिख रहा हूँ। मीरा बाई के सम्बन्ध में मैंने तुम्हें उसका पक्ष लेकर बहुत दृढ़ता से बताया होगा। किन्तु उसे मैंने जितना रुलाया है उतना किसी भी स्त्री-पुरुष को रुलाया नहीं। और उसका कारण मेरी कठोरता अधीरता और मोह है। मीराबाई द्वारा किया हुआ त्याग मैं अवर्णनीय समझता हूँ। और इस लिए वह पूर्ण हो, यह मेरी इच्छा है। उसमें जरा भी कमी दिखाई दी और उस मोह के कारण अधीरता से उस पर कुछ क्रोध कर डाला कि वह (उसकी आँखों से) अश्रुपात कर चली। इन अनुभवों से मैं अपने में भरी हुई हिंसा को पहचान सका और उससे अपनी भूल का स्मरण कर मैं अपने को सुधारने का प्रयत्न करने लगा हूँ। इसी कारण मुझे तेरे पत्र अच्छे लगते हैं। मुझे उत्तर के रूप में मैं कुछ दे सकूँगा या नहीं नहीं जानता। किन्तु मुझे तो लाभ हो रहा है। इस वस्तु की—मेरी कठोरता की—जानकारी मुझे विलायत में हुई। मेरी सेवा में स्वभावतः मीरा ही थी। वहाँ भी उसे रुलाने में मैंने कुछ बाकी न रक्खा। किन्तु उसमें मुझे शिक्षा प्राप्त हुई। किसी के भी बारे में मेरी मूढ़ावस्था ईश्वर ने अधिक देर तक रहने न दी। राजनीति में भी जब जब मैंने गलती की है तब-तब ईश्वर ने मुझे तुरन्त सुधारा है। तेरे पत्र ऐसी जागृति में सहायता कर रहे हैं।

अब मुझे क्या लिखना था वह ज्यादा अच्छी तरह समझ में आ जायेगा। मनुष्य में फूट की भाषा—अपेक्षा देख या गलती है। एक ढंग में आँखों का नेत्र बनाया है किन्तु अपना अन्धा मंगलमय मानता है। उसकी रक्षा भी उसे मान्य है। अतः आँखों का नाश में रहकर भी इस विश्वास है कि यह उन्हें कुछ भी न मिलेगा; कुछ भी न मिलेगा। वह अपने नाव लाठी लेकर चल रहा है। लाठी से आँखों का काम लेता हुआ वह जा रहा

है और कदम रख रहा है। उससे सब मिलाकर अब तक कल्याण ही हुआ है। लाठी का उपयोग करते समय भी जहाँ-जहाँ थोड़ा-सा रास्ता भूल गया हूँ वहाँ-वहाँ दुरुस्त मन मालूम हुई है और पीछे घूम कर लाठियों को मैं अपने पीछे घुमाया है। मेरा प्रयोग चल रहा है तब तक तो ऐसे ऐसे आदमियों को टीका टिप्पणी करने के कारण मिलते रहेंगे। प्रयोग बाद तब टीका-टिप्पणी के कारण न मिलेंगे। इस बीच हम सब अंधे रहनेवाले होने के कारण हाथी को जैसा देखेंगे वैसा कहेंगे। हम सब के कथन भिन्न होने पर भी उतने उतने अंशों में वे एकदम सच होंगे। और आखिरकार हम सबों ने हाथी का ही स्पर्श किया होगा। जब हम लोगों की आँखें खुलेंगी तब हम सब मिलकर नाचेंगे और चिल्लायेंगे—"अरे, हम लोग कैसे थे! यह तो हाथी है जिसके बारे में हम लोगों ने उस गीता में पढ़ा था।" हम लोगों की आँखें जल्दी खुली होतीं तो कितना अच्छा हुआ होता किन्तु देर से खुलीं इसलिए क्या बिगड़ा? ईश्वर के घर समय का माप है। नहीं अपना दूसरा माप है। सब ज्ञान में अज्ञान छुप ही जायगा।

तुझे मुझमें जो-जो कुछ टेढ़ा-मेढ़ा दिखाई दिया होगा—उसके उत्तर अब तू इसमें से क्या न निकाल लेगी। इसका अर्थ यह नहीं है कि अब तू अपने प्रश्न मेरे सामने न रख। रखती जा और मैं उत्तर देता जाऊँगा।

ता० १०—१—११ बापू के आशीर्वाद
यरवदा मन्दिर

[पत्र—२३]

मूल और अभिमान आश्रम

चि० — तू मुझे पूर्ण करना भूल गई। इसीसे मैं समझता हूँ कि एक से तेरा सब सवार किया। यह गलती तू जितनी बड़ी मानती है मैं उतनी नहीं मानता। मैं उलटा इसके लिए कहता हूँ कि गलतियों के पुतले ऐसे जो हम लोग हैं वे किसी काम में एक भी गलती न करें तो हमें गर्व

फिर वह कितना ही सूक्ष्म क्यों न हो) उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। नारद के बारे में जैसा रामचन्द्र ने अथवा शिव ने किया वैसा राम ने तेरे बारे में किया, ऐसा दिखाई देता है। दोनों काम हुए। गाथ उतरा और अब गलती न होगी।

तेरे पत्र में जो शब्द-चित्र हैं उन पर आज कुछ लिखने लायक नहीं है। तू कठोर है यह मैं नहीं कहता। तेरी टीका मेरे काम की ही है। सब में गुण दोष भरे हुए हैं। यदि तू गुण कम देखती है तो अधिक देखने की आदत डाल।

मेरे पत्र से सोच में पड़ने का   के लिए कोई कारण नहीं था।   चक्कर ही रहा है। दूसरे शारीरिक कामों के लिए उसे मैंने समय ही नहीं रक्खा है इसके लिए वह क्या करे! इसमें मेरी रचना-शक्ति की अपूर्णता है। आश्रम शुरू किया तभी सुव्यवस्था कर सका होता तो आज भी कुछ लोगों का केवल देख रेख करने इत्यादि में समय जाता है ऐसा न जाता। चला सो चला। अब भी फेरफार हो सकता है ऐसा मैं समझता हूँ। किन्तु वह कैसे किया जाय यह नहीं सूझता और मेरी अपेक्षा इन बातों में आश्रम-नियमों के अनुसार अधिक विचार कर अमल कराने वाला अथवा कराने वाली कोई अब तक हमें नहीं मिली है। नहीं मिलता तब तक जो है उसे सहन करना चाहिए। बहुत अपूर्णता है यह ध्यान में रखना है। क्योंकि मेरा मत ही है कि आश्रम में सब लोग शारीरिक काम स्वाभाविक कर सकेंगे और सुव्यवस्था हो सकेगी यह सम्भव है। इस विश्वास के साथ हम अब कभी तो मुझे हाथ लगेगी।

ता० ७—१—३२   बापू के आशीर्वाद

यरवदा मन्दिर

[पत्र—२४]

साथियों के दोषों की जिम्मेदारी : संकर विवाह : वैवाहिक सम्बन्ध विच्छेद : सहशिक्षण : सौन्दर्य

चि० —, तेरा पत्र मिला। अब मुझे बायें हाथ से ही लिखना पड़ेगा अतः बायाँ हाथ दायें हाथ की गति से चलेगा नहीं। *महादेव की मदद जब मिलेगी तो किन्तु इसे लेख के बारे में नया प्रयोग ही कहना चाहिए। देखूँ कब तक लिखा ले सकता हूँ। केवल प्रेम के पत्र लिख लेना बन सकता है या नहीं देखना है। काम के होंगे उतने लिखा लूँगा।

तेरे पत्र से मैं जरा भी नहीं डरा था। हम सबको या तो रोज बढ़ना चाहिए या कम होना चाहिये। स्थिर जैसा कुछ भी नहीं है।

दोषों की जिम्मेदारी मैं अपने ऊपर ही लेता हूँ। इसमें भाषा की नम्रता अथवा अतिशयोक्ति जरा भी नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं कि दूसरे दोष से मुक्त हो जाते हैं किन्तु जो मुख्य है वह जैसे अच्छे का यश लेता है वैसे ही बुरे का—अपयश का—स्वामी भी उसे बनना चाहिए।

संकर विवाह की आवश्यकता एक मर्यादा तक मैं मानता हूँ।

जब पुरुष को सम्बन्ध विच्छेद करने का अधिकार है तो स्त्री को वह होना चाहिए। किन्तु सामान्यतः मैं इस प्रथा के विरुद्ध हूँ। प्रेमी की गाँठ अविभाज्य होनी चाहिए।

स्त्री पुरुषों की शिक्षा अलग भी हो और एकत्र भी हो यह स्थितियों पर निर्भर है। कानून की शिक्षा एकत्र होनी चाहिए। इस सम्बन्ध में सभी देशों के लिए सभी परिस्थितियों में लागू होने वाला एक नियम मुझसे बनाते न बनेगा। यह विषय सरल नहीं है। कहीं भी निश्चयात्मक परिणाम कोई निकाल न सका है। यह सारा प्रश्न प्रयोग के क्षेत्र में है।

---

*स्व० महादेवभाई से अभिप्राय है।

सौन्दर्य की स्तुति होनी चाहिए। किन्तु वह मूक अच्छी, और आकाश के सौन्दर्य-दर्शन से जो हर्षित न होगा उसे कुछ भी पसन्द न आयेगा ऐसा कहा जा सकता है। किन्तु जो हर्ष से पागल होकर नक्षत्र मंडल तक पहुँचने के लिए सीढ़ी बनाने लगे वह मूर्छित है।

चीन जापान के बारे में अपनी सहानुभूति चीन की ओर ही होगी। किन्तु वस्तुस्थिति मैंने किसी लड़के के पत्र में दिखाई है वही मालूम होती है।

ता० ११—१—३१ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मन्दिर

[पत्र—२५]

पत्र और अभिमान। मृत्यु-भय मूर्खता है। मनुष्य और समत्व। विदेशी कागज पदार्थ का पाप

चि०—, बायें हाथ से लिखने का निश्चय किया कि लिखने की प्रवृत्ति अपने आप ही कम होती है। अभी वह आदत नहीं पड़ी इस लिए। विलायत से जो कागज इत्यादि लाये हैं उन्हें हमें उपयोग में लाना है। उनसे बुद्धि-भेद होने की सम्भावना हो तो वैसे ही रखने चाहिएँ। पीछे से उपयोग में लाये जा सकेंगे।....

.......पत्रों के बारे में अभिमान (आग्रह) आवश्यक है। अभिमान (गर्व) मानने में कैसी भी हूँ, मेरा पत्र चूक नहीं सकता यह अभिमान त्याज्य है।

मुझे माता याँ देगी ही नहीं ऐसा अधिकार से यदि मैं कहूँ तो मुझे मेप० की के बारे में उत्तर देना पड़ेगा न उसके (माता के) पास मे छूटने का प्रयत्न करते समय भी कोमलता और सेवा-भाव हमें न छोड़ना

०—आश्रम को भेंट हुआ आश्रम का एक छोटा बालक।

चाहिए। कोई मरेगा तो क्या होगा यह विचार मूढ़ता का है माना न? नहीं। मरना सभी को है यह एक बार जानने पर उसका विचार क्यों करना? और दूसरी बात यह है कि अपनी इच्छा से नटवर के हाथ की गुड़िया बन जाने पर फिर चर्चा किस लिए? उसे जैसे नचाना होगा वैसे वह नचायेगा। मुख्य बात तो नाचने की है न? जिसे हमेशा नाचने को मिलेगा उसे और दूसरा क्या चाहिए?....

......तेरे दोषों की मैं चर्चा करूँ ऐसी माँग द्वारा तू स्तुति चाहती है क्या? मुझे तेरे दोष दिखाते नहीं हैं। क्या एक से अधिक बार मैं तुझे लिख नहीं चुका हूँ? उसमें कितने सुधार किये, यह बता फिर और विचार करूँगा।

ईश्वर के भक्तों में एक सीमा तक ही समता होती है। पूर्ण समता जिसमें प्रकट होती है वह परमेश्वर है किन्तु वह तो एक ही है। सब पूर्णतम मनुष्य में भी समता अपूर्ण ही होगी। अतः मतभेद और विरोध होगा उसमें दुःख मानने का कारण नहीं। जगत विषमता का परिणाम है। अपना धर्म सोच समता का अंश प्राप्त करने का होना चाहिए। ऐसा करने से विषमता अलग मालूम होने के बजाय कम और कुछ अंशों में सुन्दर भी प्रतीत होगी।

और देशों से हिन्दुस्तान का सब कुछ अच्छा है ऐसा मानने के लिए कोई कारण नहीं। और उतार-चढ़ाव यह विश्व का नियम ही है। कुल मिलाकर हिन्दुस्तान में बहुत कुछ है, इसलिए हिन्दुस्तान जित राष्ट्र हुआ—जीतने वाला नहीं। इसका गर्भितार्थ यह है कि गुलामी की अपेक्षा अत्याचार करने वालों की स्थिति अधिक खराब होती है।

अपने पास खगोल विद्या पर और अध्यक्ष जिंसेसर की कौन सी पुस्तकें हैं?

ता. ११—३—३२ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मन्दिर

[पत्र—२६]

स्वप्न : प्रौढ़ स्त्रियाँ और सेवा-कार्य : मनुष्यता

चि — तेरे मन में आवें वे प्रश्न पूछने का ऐसा अवसर फिर कदाचित् न आयेगा। तुझे मालूम नहीं कि मैं एक पंक्ति में भी उत्तर दे सकता हूँ और पृष्ठ के पृष्ठ अंकित कर सकता हूँ। अधिक लिखने लायक न हुआ तो थोड़े में समाप्त करूँगा। तो भी उत्तर अपूर्ण न होगा। मेरे दाहिने हाथ पर तेरी चीज का प्रभाव पड़ा यह कल्पना कौवा डाल पर बैठा और डाल टूट गई अतः कौवे के भार से डाल टूटी ऐसा समझने की तरह है।

मुझे स्वप्न तो आते हैं किन्तु मन का उभर कदाचित् ही ध्यान आता है। स्वप्न आते हैं किन्तु उन पर मैं कुछ गौर नहीं दिया करता।

अपने पुस्तकालय में कार्लाइल और रस्किन की पुस्तकों का पूरा सेट होगा। हो तो उसकी सूची भेजो।

सब पुस्तकों की सूचियाँ अपने पास कितनी होंगी। एक से अधिक हों तो मुझे एक भेज दे।

प्रौढ़ स्त्रियों के बारे में मैंने तुझे कभी लिखा नहीं, आज लिखना चाहता हूँ। आश्रम की बहिनें, किसी सामाजिक हेतु से एकत्र हुई दिखाई नहीं देतीं। इसका अर्थ—संघ टूटा है। इस बारे में को और

को लिख ही दिया है किन्तु उसका उन पर कोई प्रभाव हुआ दिखाई नहीं देता। मिलकर काम करने की जिम्मेदारी अपने पर लेने की शक्ति स्त्रियों में आनी चाहिए। तुझे साहस और आत्म-विश्वास होता हो तो तू यह काम अपने हाथ में ले। यदि हाथ में लेना हो तो "न हारूँगी" ऐसा निश्चय करके ले। अपने पास सब अनुकूल होने पर ही काम करना यह कुछ किया नहीं कहलाता। जैसे बिन लकड़ी के टुकड़े से बढ़ई आकृति बनाता है जैसे बिन पत्थर में मूर्तिकार मूर्तियाँ बनाता है वैसे ही अपने जैसे मनुष्यों के साथ रहने और उनसे काम कराने आता हो तो ही मनुष्यता

कहनी चाहिए। मैं तो समझता हूँ कि हमें यहाँ संसार में जीतना है और इसके लिए हममें समुद्र-सी उदारता होनी चाहिए। किसी से मिलने पर उसके दोष ही देखने लगें तो काम ही बिगड़ जायगा। दोष तो अपने में और अपने सामने के आदमियों में है ही। फिर भी उनसे हमें मिलना है यह निश्चय हो तो ही काम पूरा होगा। यह बहुत कठिन काम है यह मुझे मालूम है। कई वर्षों से मेरा तो यह व्यवसाय ही है। किन्तु मैं पार हो गया ऐसा नहीं कह सकता। थोड़ी सी सफलता मिली-सी मालूम होती है इसलिए तो दूसरों को आगे ले जाने की हिम्मत अथवा धृष्टता (साहस) करता हूँ।

अब तुझे उचित लगे सो कर। यह पत्र बहिनों के सामने रखना चाहे तो रख सकती है।

ता २८—१—३२ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

[पत्र—२७]

आश्रम : प्रेम का स्वभाव

चि — तेरा पत्र मिला। तलवार, जंबिया आदि के प्रयोग हम आश्रम में क्यों करें ? इस बात की के पत्र में चर्चा की है अब यहाँ उसके बारे में नहीं लिखता। तू कुछ यह सीख रही है इसलिए तेरे सामने ऐसा प्रश्न उपस्थित हुआ या नहीं यह पूछने के लिए ही यहाँ लिखा है।

तू आश्रम को जो प्रमाणपत्र दे रही है वह मैं न दूँगा। तब होगा तो मुझे यह प्रमाणपत्र अवश्य पसन्द आयेगा। आश्रम जिस प्रश्न को हाथ में लेता है उसके पीछे पागल हो जाता है यह प्रभाव कदाचित् तुझ पर पड़ा होगा। यह ठीक नहीं है। आश्रम के व्रत ही पूरी तरह हम कहाँ समझ में आते हैं। आश्रम में हिन्दी उर्दू तमिल तेलगू, संस्कृत सिखाना या उसके विषय में बहुत ही शिथिल प्रयत्न हुआ है। धर्मकला हम लोग कहाँ सीख चुके हैं ? अच्छा पतला सूत हम लोग कहाँ निकाल सकते हैं ? ऐसी

अद्भुत सी बातें मैं लिखा सकूँगा। मेरी शंका के समर्थन के लिए इतना बस है। लाठी आदि के पीछे हमी लग सकते हैं। यह बात मिठाई के पीछे तब लग सकते हैं यह कहने की तरह हुई। संसार में ऐसी चीजें हैं जिनके पीछे लगने में परिश्रम नहीं लगता। पशु-परिवार के होने के कारण इसमें यह गुण स्वभावतः होता है। यह कुछ उत्पन्न नहीं करना पड़ता। उत्पन्न करना उचित है या नहीं यही प्रश्न है। पशु आदि के सभी गुण त्याज्य हैं ऐसा तो नहीं है।

आज-कल रसोई (भोजन-गृह) में कितने काम लगते हैं? क्या रोटी अब भी बनती है? बनती है तो कौन बनाता है? अच्छी बनती हो तो कोई इधर आये उसके साथ एक तो देखने के लिए भेजना।

शीहित जी के 'ज्योतिःशास्त्र' का गुजराती अनुवाद हुआ है वह मेरे पास है। 'सास' का नहीं मिल जायगा। वह नहीं मँगाता। अब्दुल लिस्सेसर की भेजी हुई पुस्तकें आश्रम की ही हैं उन्हें जमा कर ले और उनमें से 'बीस्टन' और मालकम मेज दे। शेष पुस्तकों की सूची भेजना।

उपनिषद मुझे पसन्द आते हैं। उनका अर्थ लिखने लायक मेरी योग्यता है ऐसा मुझे नहीं मालूम होता।

मेरी परिहास की प्रकृति तुझे पहचाननी चाहिए। 'स्तुति करवाने के लिए बोल पूछती है' इसमें इतना सच है ही कि जो मनुष्य प्रेमी जन से बोल पूछता है उसका धन स्तुति सुनने में ही होगा। क्योंकि प्रेम बातों पर परदा डालता है अथवा दोनों को गुण रूप से देखता है। किसी प्रसंग में दोष दिखायें यह प्रेम की प्रकृति है और वह भी पूर्णता देखने के लिए ही। के पास मैंने तुझे हिस्टीरिकल कहा था। उसमें भी तेरी स्तुति थी। यह • जो मुझे बताया गया? क्योंकि यदि मैं तुझे हिस्टीरिकल न समझता तो तू अधिक रोनी डरती, ऐसा प्रसंग वह था। तू हिस्टीरिकल है ही। तू पागल की तरह हो जाती है इसका क्या अर्थ है? जिस मनुष्य को भावनाओं का उफान आता है वह हिस्टीरिकल है यह समझनी है न?

आराम की कम के रिसीप में लिखा अवश्य मिलने का हिट थी किन्तु

उसमें जापान की नीति अनुकरणीय है ऐसा नहीं। किन्तु आज हम अपनी ही नीति सँभाल लें तो भी पर्याप्त होगा। जापान की नीति सँभालने वाला करोड़ों आँखों वाला सतत-जाग्रत सत्य पुरुष बैठा ही है।

ता० १—४—१२ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—२८]

स्त्रियाँ और संघ सेवा कार्य। धर्म-परिवर्तन। हिन्दू धर्म के मूलतत्त्व

चि०— तू एक पत्थर से बहुत सी चिड़ियाँ मारने का लोभ रखती है! एक झटके से बहुत से बेर गिराने का लालच क्यों नहीं रखती? चिड़ियाँ मारने का लोभ कम से कम त्याज्य होना चाहिए।०

बहिनों के बारे में संकट पड़ने का कारण नहीं। तेरी ओर से बहिनों की सेवा लेने की इच्छा हो और तुझे आत्मविश्वास अनुभव होता हो तो तुझे वह देनी चाहिए। अन्यथा यह बात सामने आई तो मानों आई ही नहीं ऐसा समझ कर भूल जाना चाहिए। आत्म-विश्वास शिक्षा देने के बारे में नहीं तेरी नम्रता के बारे में, ज्ञान गलत न होने देने के बारे में; कठिन प्रसंग आते ही उनका सामना करने के लिए; कई बार हम अपमान, गलत ख्याल आदि के डर से जिम्मेदारी लेने में हिचकिचाते हैं। इस संकोच को तू पार कर सकती है तो जिम्मेदारी ले। बहिनें सब भली हैं ऐसा तू मानती है। उनके विचार मिल सके, आखिर सँभाले ऐसे मददगार की उन्हें आवश्यकता है। अपढ़ स्त्रियों में पढ़ी लिखी लड़कियों से समझ, व्यवहार बुद्धि अधिक हो सकती है। किन्तु उन्हें इस बुद्धि का उपयोग अपनी निरक्षरता के कारण करते न बनता होगा। यह कमी लड़कियों के द्वारा पूरी करने लायक है। यह कमी तू पूरी कर यह मेरी इच्छा है—। किसी न किसी बहाने से आई सब बहिनों को एकत्र करती थी।

०अँग्रेजी कहावत का शब्दशः अनुवाद न कर प्रसंग औचित्य के अनुकूल उसका रूपान्तर करने की यहाँ सूचना है।

[पत्र—२९]

'कला कला के लिए' : आश्रम : स्वच्छन्द होने का अर्थ ।

चि०— सचमुच तू लिखने की स्थिति में नहीं थी। पत्र लगभग हमेशा के इतना ही है किन्तु उसमें सौष्ठव नहीं। जब खाने की आवश्यकता न हो तब खाना नहीं चाहिए। घूमने की आवश्यकता न हो तब घूमना नहीं चाहिए। वैसे ही लिखने की आवश्यकता न हो तब लिखना नहीं चाहिए। अथवा 'थकी हूँ अतः नहीं लिख सकती, इतना लिखकर पूरा करना।

दिवस के अन्त में आनन्द होने के बजाय मन में चिड़चिड़ाहट होती है यह अच्छा लक्षण नहीं है। अनासक्ति तो नहीं ही है। मेरी सलाह है मेरा आग्रह है कि तू अपना कताई अपना विस्तार कम कर। उससे तेरा अथवा आश्रम का कुछ नुकसान न होगा। प्रफुल्ल चित्त से थोड़ा काम बढ़ने लगता है।

लेखिम में उत्पन्न होने वाले प्रश्नों पर तूने जो लिखा है वह विचार न करते हुए लिखा गया है ऐसी आशा है।* 'आर्ट फार आर्ट्स सेक' मनुष्य को कहाँ ले जाती है तू नहीं जानती। उसके नाम पर आज पश्चिम के लोग सीधे नरक में उतर पड़े हैं। 'आर्ट' की परिभाषा ही कदाचित् लिखते समय तेरे ध्यान में न रही। किन्तु मेरे पत्र में सब बेतौल लिखा जायगा। पर तूने मुझे पहिले ही सावधान कर दिया है, अतः मैं तुझे अधिक नहीं लिखता।

यह सम्भव है कि तू खुद को हिस्टीरिकल न दिखाई दे।
भी यह देख न सकी होगी। और हिस्टीरिकल का अर्थ भी तुममें से किसी के ध्यान में न आया होगा। उस शब्द का अर्थ देखने के लिए तूने कभी शब्द-कोश भी न खोला होगा। अपने एम. ए. वगैरह को अंग्रेजी आती ही है ऐसा नहीं। उसमें भी ऐसे खास शब्दों का अर्थ बहुत कम लोगों को

*कला के लिए कला।

[पत्र—२०]

धर्म-परिवर्तन : श्रद्धा की गति : ज्ञान उपासना और कर्म : आवश्यकताओं पर संयम ।

चि०— मैं समझता हूँ कि   को खींचकर घुमाने मत ले जाओ। उसमें उत्साह न होगा तो वह घूम न सकेगी। उसे प्राणायाम सिखाना, और थोड़ी सी पैसिव एक्सरसाइज दी कि अभी बस है। ये प   तुम्हें मालूम है।

धर्म-परिवर्तन के बारे में मेरा कहना यह नहीं है कि कभी परिवर्तन हो ही नहीं। किन्तु एक दूसरे को अपना धर्म बदलने के लिए प्रेरित न करना चाहिए। मेरा धर्म तो सच्चा और दूसरा झूठा, ऐसे जो विचार ऐसे धर्मान्तर के पीछे हैं उन्हें मैं दूषित समझता हूँ। किन्तु जहाँ बचपन अथवा गलत समझने के कारण किसी ने अपना धर्म छोड़ा होगा वहाँ वैसे मनुष्य को सत्य आचरण करने के लिए अर्थात् अपने मूल धर्म में आने के लिए रोक न होनी चाहिए। इतना ही नहीं बल्कि वैसे भाइयों को उत्तेजन देना उचित है। मुझे मेरा धर्म झूठा मालूम होता हो तो मुझे उसका त्याग करना चाहिए। दूसरे धर्मों में जो अच्छा मालूम होता हो उसे मैं अपने धर्म में ले सकता हूँ—लेना चाहिए। मेरा धर्म अपूर्ण मालूम होता हो तो उसे पूर्ण बनाना मेरा कर्तव्य है। उसमें दोष दिखाई दे तो दूर करना यह भी कर्तव्य है।

×मीरा बाई को मैं ईसाई समझता हूँ—अब तो वह भी खुद को ईसाई समझती है। ईसाई होकर भी गीता भावपूर्वक पढ़ती है इसमें मुझे विरोध नहीं मालूम होता। अपनी भावना अन्य धर्म के मनुष्य भी भक्ति से गाते हैं।

स्वराज्य मिलने पर मैं क्या करूँगा यह सचमुच मैं नहीं जानता।

×मीरा बाई = मीरा बहिन (भूतपूर्व मिस स्लेड), गाँधी जी की अनुयायिनी एक अंग्रेज महिला।

समय मुझे ईश्वर मार्ग दिखायेगा—जैसे आज यह दिखा रहा है। अलबत्ता मनुष्य पहले से तैयारी नहीं कर रखते। पहले से तैयारी करनी है यह भला नहीं समझा हो तो वह शिथिल भक्त है।

ज्ञान उपासना और कर्म ये ईश्वर प्राप्ति के तीन विभिन्न मार्ग नहीं हैं—ये तीनों मिलकर एक मार्ग हैं। उनके तीन भाग सुविधा के लिए कर दिये गये हैं। पानी हाईड्रोजन आक्सिजन से बना है किन्तु पानी माने हाईड्रोजन नहीं अथवा आक्सिजन भी नहीं। वैसे ही ज्ञान प्राप्तिमार्ग नहीं अथवा भक्ति भी नहीं। प्राप्तिमार्ग तीनों का मिलकर रासायनिक प्रयोग है यह साधारणतया कहा जा सकता है। इस उपमा में दोष है तो भी मुझे जो बताना है उसे समझने के लिए पर्याप्त है।

द्रौपदी की लाज बचाई यह पानी की शराब बनाने की तरह चमत्कार* नहीं है। संकट के समय ईश्वर अपने भक्तों की मदद करता है यह विश्वास उपयोगी है। ऐसे असंख्य दृष्टान्त हैं। किन्तु ऐसी मदद की इच्छा से कोई भक्ति करे तो व्यर्थ है।

जबरन् लोगों के शरीर मजबूत करने की पद्धति मुझे पसन्द नहीं। उसके लिए जबरदस्ती की आवश्यकता ही न होनी चाहिए। शरीर दुरुस्त रहने देना किसी को पसन्द आता है ऐसा सुनने में नहीं आया। यह शिक्षा का विषय है।

आवश्यकताएं कम करना यह आदर्श लोगों के सामने रखने लायक है। इसका अर्थ जो होना हो सो हो उसमें शक्ति कहाँ छिपी है! शक्ति लाने न करने का प्रश्न ही नहीं। जो गरीब भूख के कारण मर रहे हैं उनकी आवश्यकताएं बढ़ाना ही पड़ेंगी। किन्तु यह कोई कठिन नहीं। आज वे प्रयत्न चल हो रहे हैं।

ता. ११—४—१९ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

*ईसा ने ऐसा चमत्कार दिखाया था, यह उल्लेख बाइबल में है।

[पत्र—२१]

आश्रम की कल्पना ; अपने प्रति असन्तोष ; 'प्रेमळ ज्योति तारो दाखवी'

चि —, यदि तुम पर काम का बोझ अधिक पड़ता हो तो वह कम नहीं होता यह कहना मुझे नहीं जँचता। इन विचारों में मोह और दुर्बलता है। तुझे चिढ़ मालूम होने का कारण तू खुद ही होनी चाहिए। काम का बोझ उसका कारण नहीं यह मैं समझ सकता हूँ। ऐसा ही हो तो धीरे-धीरे तू बनती जायगी। क्योंकि बहुत देर तक तू अपने को न ठगेगी। इस बारे में मैं तुझे तंग करना नहीं चाहता। तू अपनी नाजुक तबीयत को मजबूत बनाये।

अपनी पुस्तकों में कितनी ही उर्दू पुस्तकें हैं। उनमें से कितनी ही इमाम साहब के घर हो सकती हैं। वहाँ भी जाँच कर। तुमसे यदि उनके नाम पढ़ते न बनें तो परशुराम को पढ़वा कर बतायेंगे। इन पुस्तकों में सीरत्—उन्—नबी हो तो भेजो। मौ० शिबली ने लिखी है। दूसरी या मुहम्मद अली की लिखी हुई नबी (पैगम्बर) की जीवनी है। वह भी भेज। सीरत के दो भाग हैं।

जहाँ चारों ओर मजदूर हैं वहीं सच्चा जीवन है। आश्रम की कल्पना ही ऐसी है। हाँ यह सच है कि मजदूर सत्याग्रही होने चाहिएँ। तू नहीं है? और भाई-बहिन नहीं हैं? सभी यथाशक्ति हैं ऐसा मैं मानता हूँ। 'आप कब आयेंगे' ऐसा तू पूछती है। आँखों का उपयोग करेगी तो मैं तुझे वहीं दिखाई दिये बिना न रहूँगा। मेरी आत्मा तो वहीं वास कर रही है। फिर शरीर वहाँ हो अथवा मिट्टी में मिले। शरीर वहाँ हो तब मैं वहाँ न होऊँ यह बिलकुल सम्भव है। तू इस सत्य को देख और अस्मा की भूल जा।

असन्तोष चाहिए ही। किन्तु वह असन्तोष खुद के बारे में हो। "अब क्या अब मैं पूर्ण हो गया" ऐसा समझकर मैं बैठूँगा उसी दिन से मेरा विनाश हुआ समझो। अतः तुझे अपने बारे में असन्तोष मालूम होना ही चाहिए। इस असन्तोष का अर्थ मैं अपने कर्तव्य-कर्म में हमेशा परिवर्तन करने की ही इच्छा करूँ, यह कदापि नहीं है।

किन्तु यह अब तक से समझाया नहीं जा सकता। समय अपना काम करेगा ही। आज जहाँ घोर अँधेरा मालूम होता है वहाँ कल प्रकाश मालूम होगा। मुझे तो उस स्थिति का यथार्थ वर्णन करने वाला भजन 'प्रेमल ज्योति' मालूम होता है। गुजराती में भी अच्छा आया है। अँग्रेजी तो अलौकिक है ही।……।

……तेरा वजन क्या है? दूध-दही मिलाकर कितना लेती है?

ता १—६—३२ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

[पत्र—३२]

आत्म-वञ्चना : आश्रम शोभा के लिए नहीं सेवा के लिए : आध्यात्मिक उन्नति : योगः कर्मसु कौशलम् : प्रार्थना

चि०— आध्यात्मिक निरीक्षण करने की आदत डाली कि झूठा संकोच दूर हो जाता है। और हम जैसे हैं संसार के सामने दिखाई देने लगते हैं। यह स्पष्ट है कि यह बात सत्यशील आदमियों पर ही लागू होती है, दम्भी मनुष्यों से अपना निरीक्षण बहुत दिनों तक करते ही न बनेगा—वह असाध्य है।

• • के बारे में तूने लिखा वह सब सच है। उससे ताकत के बाहर काम ही न लेना चाहिए। किसी से न लेना चाहिए। किन्तु साधारणतः मनुष्य खुद को ठगता है अपने बारे में खूब उदार बनता है और थोड़ा-सा भी किया तो बहुत कर लिया, ऐसा समझने लगता है। अतः सामान्यतः किसी ने बहुत काम किया हो तो भी उसे रोकने की मुझे इच्छा नहीं होती……।

निरीक्षण करने के बारे में मैंने लिखा है उससे कोई जड़वत् न बनेगा। एक मनुष्य भी आश्रम में रहकर जड़वत् बना तो भी कार्य पद्धति में दोष है ऐसा मैं कहूँगा। कार्य-पद्धति पूर्ण नहीं है यह मुझे मालूम है। और आश्रम में रहने वाला कोई जड़ नहीं बना और कितने ही जड़ चेतनामय बन गये

है। इस पर से मैं अनुमान करता हूँ कि कुछ नहीं तो कार्य-पद्धति एकरूपवत् सुनिश्चित कार्य-साधिका होनी चाहिए। आश्रम में विभिन्न प्रवृत्तियों के संचालक अपने विषयों में पारंगत विशेषज्ञ नहीं हुए, इसमें दोष किसी का नहीं है। किन्तु एक ही आश्रम ने नई प्रणाली हाथ में ली है अथवा पुरानी प्रणाली नये ढंग से चलाने का संकल्प किया है। इससे मनुष्य अपने आप विशारद बनते जायँगे। इससे समय का द्रव्य का कुछ अयोग्य-सा प्रतीत होने वाला व्यय भी हुआ है। और इतना होने पर भी कई बार आश्रम शोभित न हो सका। किन्तु आश्रम शोभा के लिए नहीं। सेवा के लिए है। सेवा करते हुए यदि शोभा प्राप्त हुई तो अच्छा ही मालूम होगा। किन्तु निष्फल हुई तो भी सेवा करनी ही चाहिए। तात्पर्य यह है कि जैसे-जैसे हम कुशल होते जायँगे वैसे-वैसे हमारे काम का परिमाण बढ़ेगा और फिर भी हमें उसका बोझ कम मालूम होगा। इसका ताजा उदाहरण यह है—बायें हाथ से चक्र घुमाते समय मेरे तार* केवल ६१ ही निकले; समय अधिक गया। परिश्रम अधिक मालूम हुआ। कुशलता का परिमाण बढ़ा तब से कम समय में कम परिश्रम से मैं दो सौ से अधिक तार निकालने लगा। अब मगनरेंटिया* से लिया है। कल ९४ तार निकाले समय बहुत लिया। आज थोड़े समय में ५६ तार निकाले। परिश्रम कम। जो एक आदमी और उसके छोटे से काम के बारे में सच है वही संस्था के और उसके महान कार्य के बारे में सच है। योगः कर्मसु कौशलम्। कर्म माने सेवा कार्य—यज्ञ। हमारी सारी कठिनाइयाँ अपनी अकुशलता में हैं। कुशलता आई कि हमें काम जो कष्टकारक प्रतीत होता है वही आनन्द देने वाला मालूम होगा। संघ सुव्यवस्थित और सात्त्विक होगा तो कभी श्रम मालूम न होना चाहिए।

इसी बात की भावना के लिए तू आश्रम में आई है। पर तुम्हें निराशा नहीं। तुमको शुद्ध वातावरण से उसे निकाल लेना है। तेरी तरह

---

*तार = ४ फुट। मगनरेंटिया = दो तकुओं का चरखा।

कोई न निकाल सकेगी वह आश्रम में अन्त तक रह न सकेगी। जिसे महत्वाकांक्षा नहीं वह रह जायगा, वह बात दूसरी है। आश्रम के वास्तव में स्वतंत्र संस्था होने के कारण जिसकी इच्छा हो उसे जितना ऊँचा जाना हो उतना ऊँचा जाने के लिए उसमें स्थान है। वह उसे कोई रोक न सकेगा। तुझे अनुकूल हो ऐसा वायु-मंडल तुझी को उत्पन्न करना चाहिए। अपनी साथिनियों को तू यहाँ खींच सकेगी। किन्तु सच कहा जाय तो यह मुरगवाँ ही कहलायगी। तेरे बारे में तो जो यहाँ होंगे वे ही तेरे सगे-संगी हैं। तेरे में जो कुछ हो वह उनमें उँडेल; उनमें जो हो उसे तू ले। एक दो को छोड़कर किसी से भी तुझे लेने का लायक कुछ नहीं है ऐसा समझती होगी तो तू मोहकूप में पड़ी हुई है। मेरी समझ से जिससे हम कुछ भी नहीं ले सकते ऐसा संसार में कोई नहीं है।

रामकृष्ण के बारे में तूने जो लिखा है वह सच हो सकता है। मैं अपने को किसी प्रकार सिद्ध नहीं मानता। अतः गलतियाँ होती ही होंगी। किन्तु मेरी गलतियाँ निर्दोष होने के कारण अब तक हानिकारक हुई नहीं दिखाई दीं। अत मैं निश्चिन्त होकर मार्ग चल रहा हूँ। और साथियों को भी उसमें खींच रहा हूँ।

ता ७—५—३१ बापू के आशीर्वाद

पुनश्च—प्रार्थना पर कई बार आक्रमण हुए हैं किन्तु वह गोलाई साल रह सकी है। प्रार्थना में जितना समय रोज जाता है उसमें से कितना बचाया जा सकता है? यदि तू प्रार्थना की आवश्यकता स्वीकार करेगी तो उसके लिए खर्च होने वाले समय की शिकायत न करेगी। प्रत्येक चीज में दोष देखा जा सकता है। किन्तु सब तरह से विचार करने पर वह ठीक है ऐसा मालूम होता है। भाषणा में तुझे कौन से परिवर्तन चाहिएँ, वे मेरी जानकारी के लिए लिख। पैसिव व्यायाम दुबलों को सहायक होता है। उदाहरण : मालिश या अवसर्पासन अथ सवासासन केवल हाथ या पैर धीरे-धीरे ऊपर करना। इसमें बीमार मनुष्य पड़ा रहता है और मानसिक सहकार करता रहता है।

[पत्र—२२]

भोजन में हरे पत्तों की आवश्यकता। प्रेम विशेष नहीं अहिंसा। अभ्यास। आश्रम का शिक्षण। अमेरिका के पीटर्स।

चि०— तेरे वजन और आहार के बारे में मैंने पूछा क्योंकि मुझे तेरे स्वास्थ्य के बारे में सन्देह हुआ। अधिक से अधिक कितना वजन था? तरकारियों में टमाटर और पालक क्या भी नहीं खाती? सलाद उगाने वाले थे उनका क्या हुआ। सलाद अथवा मेथी किसी छोटी-सी क्यारी में तू खुद लगा सकती है। यह थोड़े ही दिनों में निकल आती है। कुछ न कुछ हरे पत्ते भोजन में होने ही चाहिएँ। कच्चे होने के कारण उचित ही मात्रा में खाये जायेंगे। टमाटर वाली महिने क्यों नहीं हाथ में नहीं आमता। तू खोज निकाल।

से मैं तुरन्त मिला और अब भी उनकी खोज-खबर लेता ही रहता हूँ। क्योंकि कुछ में उनसे अच्छी पहिचान हुई थी। और तेरे लिए भी मुझे उनके जीवन में आकर्षण है क्योंकि तेरे जीवन में मालूम होता है। यह व्यक्तिगत प्रेम विशेष का उदाहरण नहीं है, अहिंसा है। अमुक के बारे में प्रेम दूसरे के बारे द्वेष अथवा दूसरे के बारे में प्रेम मालूम ही न होता हो तो वह प्रेम-विशेष है। मुझ में ऐसा प्रेम नहीं है, ऐसा मैं समझता हूँ। तेरे बारे में जो करता हूँ वह तेरी आवश्यकताएँ ध्यान में लेकर तुझे मेरी आवश्यकता है और मुझे तेरी आवश्यकता है इसलिए। क्योंकि मैंने तुमसे बहुत आशा रखी है। इसमें तुझे व्यवहार-बुद्धि दिखाई दे तो मैं उसे अस्वीकार नहीं करता। मैं इसे स्वाभाविक स्वभाव मानता हूँ।

उर्दू पुस्तकों के बारे में गलती न होगी।

जब एक साथ आश्रम से (जेल) जाने के लिए तैयार हुए हों तो यह मुझे ठीक नहीं जँचता। किन्तु अब आश्रम की इतने तरह हो गये हैं कि मैं उसके बारे में चर्चा न करूँ, दुःख भी न करूँ और कुछ तो भी गलती है ऐसा समझकर समय आने पर उसे सुधारने का प्रयत्न करूँ। जिन्हें

आसानी से रोक सकूँगा उन्हें रोकूँगा । आश्रम एकदम खाली होता हो तो और तू खुशी से रुक सकती हो तो रुक जा । और काम करने वाले लौट कर आ जायें तब तू बाहर निकल । किन्तु सब कहें तो तू और तय करो । यहाँ बैठकर मुझे क्या मालूम होगा ?

ता ११—५—३१

आश्रम में दी जाने वाली शिक्षा का प्रश्न पुराना है । बोर्डिंग के साथ उसकी तुलना न हो सकेगी ऐसा मैं समझता हूँ ।——। मैं कुछ एक नियम बना दूँगा । लड़कों के मन में हरेक बात बैठनी चाहिए । ये जितना जल्दी से करेंगे उतना निरर्थक होगा और जल्दी की परम्परा कायम रहेगी । छुट्टी नहीं दी तो वह लड़कों को प्रिय लगना चाहिए ।

आश्रम की पाठशाला में तूने जो-जो किया उसके औचित्य-अनौचित्य के बारे में मुझे न्यायाधीश नहीं बनना है । मैं वहाँ होता तो अवश्य विचार किया होता । किन्तु यहाँ बैठे-बैठे मुझे वैसा नहीं करना है । तू आत्म-निरीक्षण करने वाली है । जहाँ दोष होंगे तू अन्त में सुधार ही लेगी ।

तुझे ब्रह्मज्ञान सिखाने की मैंने इच्छा की या क्या यह ईश्वर जाने । किन्तु मैं ब्रह्मज्ञान जानती हूँ ऐसा कहकर ही तूने अपना अज्ञान प्रकट किया है और जो तर्क किये हैं उनसे तेरा अज्ञान ही प्रकट हुआ है । बुद्धि के द्वारा जो ब्रह्म समझता है वह ब्रह्म जानता ही नहीं । ब्रह्मज्ञान हृदय में होता है । ब्रह्म-ज्ञान माने प्रवृत्ति मात्र का त्याग ऐसा बिलकुल नहीं । बाहर से ज्ञानी और अज्ञानी समान ही होंगे । किन्तु दोनों की प्रवृत्तियों के हेतु उत्तर-दक्षिण के समान विरुद्ध होंगे । रामनाम ब्रह्मज्ञान का विरोधी नहीं है । दोनों एक ही वस्तु हैं । जिस ब्रह्मज्ञानी को राम नाम की छुआछूत मालूम होती है वह अज्ञान-कूप में पड़ा हुआ है और गोते खा रहा है । केवल ओठों से रामनाम बड़बड़ाता है, वह ओठों को दुखाता है और समय की हत्या करता है । ब्रह्मज्ञान और मेरा शारीरिक अभिलाष पसन्द करना, ये विरोधी बातें ही होनी चाहिएँ, ऐसा नहीं किन्तु यदि मेरी अनुपस्थिति कर्तव्य परायणता को कम करे तो वह ब्रह्म

ज्ञान नहीं मोक्ष है। मुझे आत्मज्ञान हुआ है ऐसा कहने वालों को उनके न होने की पूरी सम्भावना है। वह मूक ज्ञान है स्वयं प्रकाश है। सूर्य को अपना प्रकाश मुँह से नहीं बताना पड़ता वह हमें दिखाई देता है। यही बात आत्मज्ञान के बारे में भी है।

मैं इस सरकार को मानता था तब मैं समझता था कि सरकार के कारण इस देश का अन्त में लाभ ही होने वाला है। उनका दोष सूक्ष्म है। किन्तु इस प्रश्न की गहराई में जाना अधिक सम्भव नहीं।

अमेरिका में स्त्री-पुरुषों के व्यवहार के बारे में जो साहित्य प्रकाशित हो रहा है वह मुझे पसन्द नहीं। उसके बारे में लिखने की मुझे इच्छा तो है।

लड़के प्रश्न करते हैं तब उन्हें सीधा उत्तर देना चाहिए। सिनेमा के बारे में मुझे नहीं मालूम। नाटक को जगह है। ईश्वर-प्राप्ति के लिए मुझे अपनी अनासक्ति ही अच्छी लगती है। उसमें सब कुछ आ जाता है।

ता० १७—५—१२ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—३४]

मेरे बच्चों से व्यवहार। आश्रम और लड़कियाँ। आश्रम और शिक्षा
पैसिव व्यायाम का तात्पर्य। मार्जना। [illegible]।

चि० — आगे वाले सप्ताह में तेरे मुझसे मिलने आने की संभावना है। फिर भी तेरे पत्र का उत्तर देना ही ठीक है। और कल जो हुआ उस पर से यह दिखाई देता है कि मेरी भेंट होना हमेशा अनिश्चित ही समझना चाहिए।......

......आश्रम में बड़ी हुई लड़कियाँ इतनी दुबली दिखाई देती हैं यह पोली है। यह मैं समझ न सका। मेरे पास उनके बारे में अनुमान है। किन्तु जब तक मैं उनका आधार (प्रमाण) न दे सकूँ, तब तक उसकी चर्चा बेकार है। अपने से ही उसकी खोज करनी चाहिए। वे लड़कियाँ बाहर जाकर भी अच्छी होती ही हैं, यह कोई नियम नहीं है। यह बात ध्यान में रखने लायक है।

......मेरे वचनों में मुझे कहीं व्यामिश्रता नहीं दिखाई दी। हो तो वह मेरे अज्ञान में और मेरा भाषा पर कम अधिकार होने के कारण होगी। मेरे वचन संक्षिप्त होने के कारण उनमें अध्याहार होता ही है। किन्तु वे रेखा-गणित की तरह हैं।

जिन लड़कों को अंग्रेजी सीखने की इच्छा हो उन्होंने हिन्दी और संस्कृत की ओर ध्यान दिया हो और गुजराती ठीक कर ली हो तो अंग्रेजी अवश्य सीखनी चाहिए। सिखाने वाले की सुविधा पर भी यह आश्रित है किन्तु वैसी सुविधा अपने पास होनी चाहिए।

'पैसिव व्यायाम' का मेरा अर्थ कदाचित् तेरी समझ में न आया होगा! कुछ करना हो उसे पैसिव नहीं कहना चाहिए। यह बीमार आदमियों के लिए है। मैं बीमार हूँ और मेरी अँगुलियों को व्यायाम देना हो तो उन्हें किसी से मालिश कराया अथवा मेरे पैर बीच के हिस्से (धड़) के कोण में रहें ऐसे कभी ऊँचे किये और फिर सीधे किये और इसी प्रकार बराबर हिलाये। मुझे कुछ भी न करना पड़ा तो उसे पैसिव व्यायाम कहना चाहिए। तेरे व्याख्या में ऐसा आया हुआ नहीं दिखाई देता।

मौन साधना में दो हेतु थे। मन को विश्राम देने का तो था ही किन्तु उसके बिना मन को अन्तर्मुख करना भी कठिन था।

[हाथ में लिये हुए] प्रत्येक काम में परिवर्तन करते समय बोझा मालूम होना चाहिए। अधीरता और अशान्ति न होनी चाहिए। इसी से तटस्थता प्राप्त होगी।

मुझमें एकाग्रता होगी, किन्तु मुझे सन्तुष्ट करने लायक तो निश्चित हो नहीं है। उसके बारे में मैं प्रयत्नशील हूँ किन्तु अधीर नहीं।

बच्चों की पूरी भावना में प्रेम न दीखता हो तो उनके लिए कुछ दूसरी व्यवस्था करनी चाहिए जैसा मथुरादास ने किया था। बच्चे श्रद्धा तथा शान्ति के साथ बैठ सकें तो अच्छा है।

सोलह साल से यही भावना चल रही है यह बदनामी नहीं सच बात है। उसमें ताल तब आते थे यह बताने का मेरा उद्देश्य नहीं है। आश्रम

सभी कठिनाइयों और शंकाओं के बीच इसी प्रार्थना में समाकर रहा है और उसमें से ही बहुत लोगों ने शान्ति का विश्राम किया है। उसका त्याग अथवा उसमें बहुत से परिवर्तन बहुत मजबूत कारण हुए बिना न करना चाहिए। इतना ही कहने को रहा था। बहिनों की (अलग) प्रार्थना शाम को अच्छी न लगेगी। शाम का समय बाधन आदि की ओर दिया जा सकेगा।

तेरे बारे में तूने लिखा वह ठीक है। तेरी बुद्धि को और हृदय का जो सच मालूम हो वही तुझे करना चाहिए। मैं अधीर नहीं हूँ। मैं तुझे जो उचित मालूम होता है वह बताकर मुक्त हो जाता हूँ। बलात् वह बात मैं तुझे स्वीकार न कराऊँगा। मित्र के रूप में ही उपयोगी हो सकता हूँ। उसमें भी मेरा अधिक से अधिक अधिकार मेरे दीर्घ अनुभव का ही होगा। यदि उसमें से एक का भी प्रतिबिम्ब तेरे हृदय में न पड़ा तो मेरे लाखों अनुभव तेरे विषय में व्यर्थ हैं। आश्रम के बारे में मेरा एक दावा है। जो आवे उसे वह पंख देता है। फिर उसे जिधर उड़ना हो वह उड़े। अपनी इच्छा से यदि वह रहे तो ठीक न रहे तो भी आश्रम ने अपना धर्म पालन किया। ऐसा बहुतों के बारे में हुआ यह सिद्ध किया जा सकता है। स्त्रियों के बारे में अधिक। ऐसी लड़कियाँ आश्रम में आकर गई हैं जिनमें कुछ भी उत्साह नहीं था वे आज अपने को स्वतन्त्र समझती हैं और हैं भी।

व्यक्ति प्रेम मात्र तिरस्करणीय नहीं है वह विश्वप्रेम का प्रभु प्रेम का विरोधी न होना चाहिए। मा के विषय में तुझे प्रेम है किन्तु वह प्रभु प्रेम के गर्भ में है। मैं विरबी था तब वह प्रभु-प्रेम का विरोधी था यह स्वाभ था

मा F ५—१ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—३५]

प्रार्थना : साकार या निराकार ? । सन्त वचनों का गूढ़ार्थ : मासिकधर्म : अस्पृश्यता : यूरोपीय संगीत

चि०— मुझे मूर्ख ही कहना चाहिए। प्रश्न पूछना बच्चों को अच्छा न लगते हुए उन्होंने लिखा तो वह समय का अपव्यय है। लिखने के लिए ही क्यों न हो प्रेम से लिखा तो उसमें कुछ अर्थ है। बच्चों ने इच्छा न रखी तो भी पत्र आने पर उन्हें आनन्द होना निश्चित ही है। उसमें स्वार्थ का लेश भी नहीं होता·····।

प्रार्थना में साकार मूर्ति का मैंने निषेध नहीं किया है; हाँ निराकार को ऊँचा स्थान दिया है। कदाचित् ऐसा भेद करना ठीक न होगा। किसी को कुछ किसी को कुछ अच्छा लगेगा। उसमें तुलना को अवकाश न होना चाहिए। मेरी दृष्टि से निराकार अधिक अच्छा है। शंकर, रामानुज के बारे में (तेरा भेजा हुआ) पृथक्करण मुझे ठीक नहीं मालूम हुआ। परिस्थिति से अनुभव का प्रभाव अधिक होता है। सत्य के पुजारी पर परिस्थिति का प्रभाव न पड़ना चाहिए। उसको भेद कर उसमें से पार हो जाना ही उसका कर्तव्य है। परिस्थिति के कारण बने हुए कितने ही विचार मूलतत्व ठहरते हैं यह हम देखते हैं। इसका प्रसिद्ध उदाहरण आत्मा और देह का है। आत्मा का प्रायः देह से निकट सम्बन्ध है इसलिए देह से विभिन्न आत्मा तुरन्त दिखाई नहीं देती। इस परिस्थिति का भेद कर जिसने 'नेति (यह नहीं)' इस प्रथम वचन का उच्चारण किया उसकी शक्ति की बराबरी आज तक कोई न कर सका। ऐसे अनेक उदाहरण तुझे शास्त्रों से दिखाई देंगे। तुकाराम आदि सन्तों के वचनों का शब्दार्थ निकालना जरा भी उचित नहीं है। उनका एक वचन कुछ दिन हुए मेरे पढ़ने में आया है। वह तेरे लिए यहाँ दे रहा हूँ।

कमर के लिए तुम्हें गरम पानी में बैठना चाहिए। ऐसा करने से दर्द दूर होता है और मासिक धर्म पर भी उसका अच्छा असर होता है। डाक्टर का क्या कहना है, लिखो। ऐसे रोगों का जड़ से इलाज होना चाहिए।

तेरा कार्यक्रम मैंने अच्छी तरह देखा। वह अधिक है। उसमें काट छाँट आसानी से हो सकती है। ११—१ से ५—४ तक उद्यम लगा है। अर्थात् पाँच घंटे दस मिनट हुए। इसमें से एक घंटा काम किया कि आवश्यक अवकाश निकाल लिया जा सकता है। इस समय एकान्त में सोने की इच्छा हो तो सोना काम अथवा केवल आराम किया जाय। आराम मालूम हो ऐसा जो चाहे सो करो। किन्तु गप-शप में या और दूसरे कामों के लिए यह समय न देना चाहिए। उस घंटे का उसी समय उपयोग न करना हो और दूसरे काम आगे बढ़ाने लायक हों तो उन्हें बढ़ाकर रात का समय लेना चाहिए।

जो अपने काम में तन्मय हो गया है उसे बोझ या नुकसान कुछ नहीं मालूम होता। जिसे काम में प्रेम नहीं उसे पत्ता भी अधिक मालूम होता है। प्रेम वियोगियों को एक दिन वर्ष की तरह मालूम होता है योगियों का एक वर्ष एक दिन की तरह।

मुरीद का मार्ग तू पहले सुनती थी तो डर जाती थी। अब उसमें कुछ रस आने लगा है। और अपनी मिठास भी मालूम होने लगी है।

"यहाँ (इस भव में) स्वप्न का लाभ न रखा जा सकेगा" यह कहना ठीक नहीं। स्वप्न का बहुत न दिखना यह सच है। यह [illegible] है फिर भी स्वप्न में रहने वाले बहुतों ने देखा है। [illegible] नहीं था। [illegible] मालूम होगी तो वहाँ [illegible] में [illegible] है। [illegible] हुए दिखाई देते हैं — [illegible] करना पसन्द है।

तू अच्छे पत्र लिखती है, इसलिए क्षमा माँगने की आवश्यकता नहीं है। मुझे वे उबाने वाले नहीं होते क्योंकि वे पत्र तेरे उस समय के हृदय के प्रतिबिम्ब होते हैं। उनसे मैं सीखता हूँ।

ता० १०—६—३२ बापू के आशीर्वाद

बारडोली

[पत्र—३६]

अधिकार का मद : दुःस्थिति में भलाई देखना

चि०— तेरा पत्र मुझे जरा भी बड़ा न मालूम हुआ क्योंकि मुझे जो चाहिए था वह वर्णन तूने दिया है। सिंहगढ़ पर मैं तीन बार गया हूँ। एक बार तो लोकमान्य (तिलक) के साथ गया था। उस समय हम खूब मिले उनका घर देखा…… …हरी नारायण आपटे से मैं मिला था। उनके उपन्यास पढ़ने की इच्छा बहुत है किन्तु इस समय कुछ नया हाथ में लेने की हिम्मत ही नहीं होती। लघु अर्थशास्त्र आकाश-दर्शन करना पत्र-व्यवहार वगैरा चीजें किसी प्रकार हो जाती हैं। बीच-बीच में कुछ न कुछ छूटकर पढ़ना ही होता है।

सुपरिंटेंडेंट के बारे में तूने जो लिखा वह ठीक है। मैं सब देख और समझ सका था। किन्तु यह सब सहन करना चाहिए। मनुष्य, इस दृष्टि से वह बुरा नहीं है किन्तु अधिकार बहुत बुरी चीज है। और यह अधिकार भी किस जगह! तब हमें ऐसा विचार करना चाहिए कि दुःस्थिति में भी थोड़ी-बहुत आदमीयत रखी जाती है यह कितना अच्छा है। किसे मालूम कि यदि मैं उसकी जगह पर होता तो कितना नीचे उतरा होता। तुझे ऐसे बहुत से अनुभव आते होंगे। सहन शक्ति, उदारता, दमन विवेक इसी में से सीखना। सब अनुकूल हो तब तो सभी लोग अपने को भला कहलाने लायक आचरण करते हैं।

स्त्री पुरुषों के बारे में लिखने की इच्छा थी। किन्तु तू मदन मैम ही अधिक अच्छा।

उसमें पशु-पक्षियों की तरह आचरण करते हैं। इसमें निन्दा नहीं, सच्ची स्थिति का वर्णन है। पशुत्व से निकलने के लिए मनुष्य का रूप और बुद्धि प्राप्त हुई है।

मासिक धर्म का पूरा ज्ञान उस अवस्था को पहुँची हुई लड़कियों को देना चाहिए। छोटी लड़कियाँ उसे समझें और पूछें तो वे समझ सकें इतना उन्हें समझा देना चाहिए।

लड़के अथवा लड़कियाँ हम कितना भी प्रयत्न करें कभी अन्त तक अबोध न रह सकेंगी। यह जानकर उन सबको अमुक समय पर यह ज्ञान देना ही अच्छा है। यह ज्ञान प्राप्त होने के कारण ब्रह्मचर्य पालन करते नहीं बनता; ऐसी जिनकी स्थिति होगी उनका दुर्बल ब्रह्मचर्य हमारे काम का नहीं। यह ज्ञान प्राप्त होते ही ब्रह्मचर्य अधिक सबल होना चाहिए। मेरे खुद के बारे में ऐसा ही हुआ है।

ज्ञान लेने-देने के अनेक प्रकार हैं। एक अपने विकारों की वृद्धि करने के लिए ज्ञान प्राप्त करता है दूसरे को यह अनायास प्राप्त होता है तीसरा विकारों का शमन करने के लिए, दूसरों को मदद करने के लिए यह ज्ञान प्राप्त करता है।

यह ज्ञान देने की योग्यता हो तभी और (जिसमें देने की योग्यता हो) उसी का उसे देना चाहिए। तुझे ऐसा बनना चाहिए। आत्म विश्वास चाहिए कि ज्ञान देने से लड़कियों में विकार जरा भी उत्पन्न न होंगे। विकार शमन करने के लिए यह ज्ञान तू दे रही है इस ओर तेरा ध्यान होना चाहिए। यदि तेरे में विकार उत्पन्न होने की सम्भावना हो तो यह ज्ञान देने के समय तुझमें विकार उत्पन्न न हों इस ओर तुझे ध्यान देना चाहिए।

स्त्री-पुरुष के सांसारिक जीवन की तरह मैं पति-पत्नी इस नाते भोग है। हिन्दू धर्म में उसमें त्याग उत्पन्न करने का प्रयत्न किया है। दूसरा सभी धर्मों में कम प्रयत्न किया है ऐसा कहा जा सकता है।

पति यदि ब्रह्मा, विष्णु महेश्वर है तो पत्नी भी उसी प्रकार है। पत्नी दासी नहीं समान अधिकार वाली मित्र है, सहचारिणी है। दोनों एक दूसरे के गुरु हैं।

लड़कियों का हिस्सा लड़कों के बराबर ही होना चाहिए। कोई भी जो सम्पत्ति पैदा करें उसमें पति-पत्नी दोनों ही समान हकदार हैं। पति जब पत्नी की सहायता से ही पैदा करता है! चाहे पत्नी रसोई ही क्यों न बनाती हो! वह दासी नहीं हिस्सेदार है।

पत्नी के विषय में पति यदि अन्याय करता हो तो उससे अलग होने का उसे अधिकार है।

लड़कों पर दोनों का समान हक है। वे बड़े हो गये कि किसी का नहीं। पत्नी लायक होगी तो उसका हक बढ़ जायगा। यही बात पति के सम्बन्ध में भी है।

सारांश यह कि स्त्री पुरुषों में प्रकृति ने जो भेद रखे हैं और जो खुली आँखों से दिखाई देने लायक हैं उनके सिवा और किसी प्रकार के भेद मुझे स्वीकार नहीं हैं।

मैं मनःशक्ति से काम करने की बड़ी शक्ति है। अनासक्त मनुष्य आसक्त की अपेक्षा अधिक काम करता है और आलसी रहने की तरह दिखाई देता है। यह सबके बाद समझता है। जब पूछा काम तो उसे श्रम मालूम ही न होना चाहिए। किन्तु यह हुआ आदर्श। तू यहाँ है तो मुझे यहाँ अशान्ति दिखाई दी, गुरु को ठग रहा है ऐसा दिखाई दिया तो तेरा काम मुझसे अलग ही गया। तुझे को सावधान करना चाहिए। मैं भी यहाँ रहूँगा और अलग यह जो लगता है उससे कुछ अलग देखूँगा तो उसे सावधान करूँगा। तेरे सावधान करते रहने पर भी वह तेरा विरोध करे तो उसका सुनना; जब तक तू उसे सत्य-वादी समझती है तब तक। बहुत बार हमारी आँखें भी हमें ठगती हैं। तू नियम है ऐसा मुझे दिखाई दिया और तू ने यह अस्वीकार किया तो मुझे तेरा सुनना ही चाहिए। मुझमें तू छिपाती है ऐसा मेरा विचार

हुआ या मुझे सन्देह हुआ तो अलग बात है। फिर मुझे तुमसे पूछने का कोई कारण नहीं। उसे पहचान कर साधन खोजना मेरा काम है। किन्तु आश्रम जीवन ऐसा नहीं चल सकता। उसकी तो जड़ में सत्य है। यहाँ तुम हेतु से भी ठगना ठीक नहीं।....

*४ जुलाई की राह जरूर देखना। जिस वर्ष की ४ जुलाई यह ध्यान में होने लायक अवश्य है। वर्ष चाहे जो हो महीना और तारीख का निश्चय हो गया यह क्या कम है। क्योंकि कम से कम दूसरे किसी महीने की या दूसरी किसी तारीख की राह न देखनी पड़ेगी। ४ जुलाई बीत जाय तो १९३३ की जुलाई तक शान्त रहना चाहिए।

ता० ११—९—३२ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—३८]

दृढ़ता लाने की चेष्टा : वचनों की बलि : सभी मार्ग से भक्ति : मौलिक विज्ञान : मेमोरेण्डम

चि — तू तीन वर्ष की हुई ऐसा मैं कहता हूँ। तू कहती है यह सच है। जब तुझे मैंने बम्बई से साथ लिया तब तू टिक सकेगी या नहीं इसका मुझे सन्देह था। किन्तु तू समझती है उतना तो नहीं था। क्योंकि तू अपने वचनों पर चली हुई। और जो मनुष्य अपने वचनों पर दृढ़ रहता है उसके बारे में मुझे सन्देह नहीं रहता। किन्तु तू यहीं, इतने दिन रहेगी ही, इसका मुझे विश्वास नहीं था। ऐसी उस समय की मेरी (मन—) स्थिति मुझे स्मरण है। मेरी ऐसी इच्छा अवश्य है कि जैसे तूने तीन साल बिताये वैसे पूरा जीवन बितायेगी का निश्चय कर और वह अनिश्चित रह कर, जैसा बीत जाय बीत जाय इस प्रकार नहीं। तू आश्रम की और आश्रम तेरा ऐसी दृढ़ता के साथ मानकर और समझ कर। किन्तु मेरा कोई आग्रह नहीं। इस सम्बन्ध में मुझसे केवल इच्छा ही प्रदर्शित करना बन सकता है। जब तक तुझे आसानी से आश्रम

*महात्माजी ४ जुलाई को छूटेंगे ऐसी भविष्यवाणी किसी ने की थी।

तेरा ही है ऐसा मालूम न होगा तब तक तू निश्चय न कर सकेगी। मैंने अपनी इच्छा तुझे बता दी।

यह हुआ तेरे आश्रम-जन्म-दिन के बारे में। तेरा अंग्रेजी जन्म-दिन ११ जुलाई को आ रहा है। और यह पत्र तुझे ८ तारीख के आसपास मिलेगा। मेरा आशीर्वाद है ही। तेरी सर्वोच्च अभिलाषाएँ सफल हों। उस दिशा में तेरे प्रयत्न चल रहे हैं इसमें मुझे सन्देह नहीं। उतनी आयु और उतना स्वास्थ्य भी साथ होना चाहिए। यह भी रहेगा ऐसा मैं समझता हूँ। किन्तु तीनों (अभिलाषाओं की सफलता आयु तथा स्वास्थ्य) का आधार अन्त में तुझ पर या मुझ पर नहीं है। सब कुछ उसे सौंपा गया है। जैसा उसे पसन्द होगा वैसा वह करेगा और वह जो करेगा वह शुभ होगा ही। ११ तारीख का अपना हिसाब भेजना। उस दिन कौन सा निश्चय करेगी यह लिख। जन्म-तिथि के दिन कोई न कोई नया निश्चय करना चाहिए, यह मैं सब को सुझाता हूँ। तुझे मालूम है या नहीं? ज्योतिषियों के कहने पर विश्वास मत रख। उनका कहना सच हो तो भी यह समझने से कोई लाभ नहीं। हानि स्पष्ट है।

उर्दू पुस्तकों में पैगम्बर के जितने चरित्र मिलें वे सब उस्वा-ए-सहाबा के दो भाग और खुल्फ-ए-राशदीन अंग्रेजी-उर्दू और उर्दू अंग्रेजी शब्दकोश शीघ्र भेज दें—

सारे काम नियमित रीति से अमुक दिन तक होने ही चाहिएँ। सामान की देख-रेख और सफाई होनी चाहिए। इसके लिए समय निकाले बिना नहीं चल सकता।

जिसकी संगति में—फिर वह व्यक्ति हो समाज हो या संस्था हो—अपूर्णता मालूम हो वहाँ पूर्णता लाने का प्रयत्न करना अपना धर्म है। गुणों की अपेक्षा दोष बढ़ते हों तो उसका त्याग—असहयोग—धर्म है। यह सार्वत्रिक सिद्धान्त है। यही मैंने लिखा था। उस वाक्य से मैंने तुझे आश्रम का

भारतीय पंचांग के अनुसार।

दूसरा कुछ सोचने के लिए नहीं कहा था। मैंने तो तुम्हें अमुक अवस्था में मनुष्य मात्र का जो धर्म माना गया है वह बताया।

बंगाल में कलकत्ते में रोज-दिन-दहाड़े हजारों बकरों-बकरियों की बलि काली माता को दी जाती है वह रोकने की योग्यता आवे इसके लिए मैं ईश्वर से याचना किया करता हूँ। यह तुम्हें मालूम नहीं था!

मनुष्य (पुरुष भक्त) खुद को गोपियों की उपमा देता है यह मुझे मालूम है। वह केवल भक्ति भाव से होता हो तो उसमें मुझे कुछ भी बुरा नहीं मालूम होता। ईश्वर के सामने सभी अबला हैं।

साहस में मनुष्य हिमालय के शिखर की तथा उत्तर ध्रुव की खोज करने के लिए अवश्य निकलेंगे।

भौतिकशास्त्र का सामान्य ज्ञान मैं लाभदायक समझता हूँ।

मेरे आहार के प्रयोगों से मेरा कुछ भी नुकसान नहीं हुआ है। वे आठ साल भी चले हैं और सात दिन भी चले हैं।

मोनोडायट (एक समय में एक ही चीज खाना) में लाभ है ही।

ता १ —१—१२ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—२६]

उपयोगिता और सजावट; दूसरों का फैसला मत करने बैठो।
प्रेम ही मार्ग है। सर्वोदय

चि —तेरा पत्र मिला। तूने लिफाफा सजाने का प्रयत्न किया और उसे बिगाड़ दिया। अनुपयोगी शोभा के सम्बन्ध में ऐसा ही समझना चाहिए। सरदार लिफाफों पर जो सजावट करते हैं वह सजावट के लिए नहीं होती। उपयोग से जो सजावट उत्पन्न होती है शोभित होती है। लिखे हुए लिफाफे का फिर से उपयोग करना हो तो लिखा हुआ नष्ट करना चाहिए इसी लिए लिखी हुई जगह पर सामने से कटी हुई कागज की पट्टियाँ—उन्होंने चिपकाई वह उन्हें अच्छी मालूम हुई। किन्तु उन्हें

उससे सन्तोष न हुआ। तो अब ऊपर से आने वालों के ऊपर उत्तर देते हैं उनमें छोटी-छोटी पट्टियाँ चिपकानी नहीं पड़तीं और ऊपर नया सा दिखाई देता है। ध्यान से देखो तब मालूम हो। तेरी फूलदार पट्टियाँ काफी खिसक आई थीं। उससे बहुत ही खराब दिखाई देती थीं। उनका उपयोग तो कुछ भी नहीं था। उसमें की हुई मेहनत व्यर्थ हुई और समय तथा उतना कागज खराब हुआ। जनता का उतना नुकसान हुआ। सारांश यह कि बिना समझे किसी का अनुकरण न करना चाहिए। शृंगार के लिए किया हुआ शृंगार शृंगार नहीं है। यूरोप में बड़े बड़े मन्दिर हैं उनके बारे में कहा जाता है कि उनके सभी शृंगारों के पीछे उपयोग अवश्य रहता है। यह सच हो या न हो। पर मैंने बताया उस नियम के बारे में सन्देह को स्थान नहीं।

इस बार के तेरे पत्र में सुपरिंटेंडेंट की टीका छोड़ कर दूसरा बहुत थोड़ा है। मुझे मालूम होता है कि यह टीका व्यर्थ है। अब उसके होने के बारे में विचार करने का कोई कारण नहीं है। Judge not lest Ye be Judged—यह वाक्य हृदय पर अंकित करने लायक है। इसी अर्थ का गुजराती वाक्य याद नहीं आता। मराठी में हो तो भेज।

उर्दू पुस्तकों की सूची चाहिए ही। शिवाजी की पुस्तक भेज दी है। और कालिका की जीवनी भी।

तू मरना पसन्द करेगी किन्तु मछली न खायेगी यह मुझे प्रिय है। इसका यह भी अर्थ है न कि तू काड लिवर आयल भी नहीं लेगी? मेरी क्या इच्छा है इसका विचार नहीं करना। तेरी मानसिक स्थिति समझने के लिए मैंने यह प्रश्न पूछा है।

तेरे भोजन में दूध या दही और घी बढ़ाना चाहता हूँ। हरे शाक के बजाय कभी कभी पका हुआ फल होना ही चाहिए। (शाक क्यों नहीं) पपीता पकता नहीं क्या? या अच्छे नहीं मिलते? किसी तरह की भाजी (आश्रम में) नहीं होती? तू खूब मोटे से टमाटर क्यों नहीं लगाती? लेटीस भी बहुत शीघ्र उत्पन्न होते हैं। कच्चा पपीता बहुत भ

खाना चाहिए और हमेशा भी न खाना चाहिए। खर्च की चिन्ता न करते हुए, इतना परिवर्तन अवश्य कर ले।

विद्यावती की मूढ़ता प्रेम से जायगी। का प्रश्न कुछ कठिन है। किन्तु उसका भी उपाय एक ही है। उस पर तीन शक्तियाँ काम कर रही हैं। जब यदि वे तीनों एक ही दिशा की ओर बहती न होंगी तो कठिन है। तीनों शक्तियाँ उसके पिता माँ और तू अथवा जिसके ऊपर उसकी देखरेख हो वह। इस परिस्थिति से भी मुक्त होना और रास्ता निकालना प्रेम का ही काम है। वह तुझमें जितना विशाल होगा उतनी तेरी शक्ति ऐसे लड़कों के सुधारने में सहायक होगी।

आश्रम की बड़ी लड़कियों के बारे में अपन में उदारता हो जाओ। ये मूठी बनकर घर में बैठी नहीं रहतीं असहाय हैं इसलिए रहती हैं। उनकी असहायता की तौल मुझसे मुझसे करते न बनेगी। वह तौल लड़कियाँ ही करें। वह मूठा भी हो सकता है। उनके मन में यह मूठा न हो बस।

पर वो लड़कों का बोझ है। अब उनसे कितने काम की आशा की जा सकती है? बच्चों का पालन कैसे करना इसकी कल्पना भी नहीं और वह इतने में बन बैठी है! इन सबका न्याय हम *धारवाड़ी तराजू से न करें। और तुझे अनुभव से दिखाई देगा कि जैसे उदारता बढ़ती जायगी वैसे लोगों से काम करा लेने की शक्ति बढ़ती जायगी। सब मूठ राम नाम। किन्तु ऐसा कहते हैं कि मुझे आदमियों से बहुतेरे काम करा लेना आता है। यह सच हो तो उसका कारण यही है। उनके सम्बन्ध में मुझे चोरी का सन्देह नहीं होता जो जो देता है उससे मुझे सन्तोष होता है किन्तु मैंने और माँगा तो वह और देता है। बहुत से ऐसा भी कहने वाले हैं कि मुझे लोग जितना ठगते हैं उतना शायद ही किसी को ठगते होंगे। वह ठीक सच ठहरी तो भी मुझे पश्चात्ताप न होगा। मैंने

---

*आश्चर्य 'बिन्दुलाकरबँद' न करने से है। हिन्दी द्वारा यह 'बावन तोला पाव रत्ती' है।

अपने जीवन में किसी को नहीं ठगा इतना भी समाधान मुझे मिला तो बस है। और किसी ने मुझे नहीं दिया तो मैं खुद को यह देता ही हूँ।

मुझे असत्य सबसे अधिक बुरा मालूम होता है। 'अधिक से अधिक लोगों का अधिक से अधिक कल्याण'* और जिसकी लाठी उसकी भैंस' ये नियम मुझे मान्य नहीं है। 'सब का कल्याण—सर्वोदय और निर्बल प्रथम' यह मनुष्यों के लिए नियम है। हम दो पैर के आदमी कहलाते हैं। किन्तु चार पैर वाले पशुओं का स्वभाव अब तक छोड़ नहीं सके हैं। उसे छोड़ने में ही धर्म है।

ता ६—७—३२ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

[पत्र—४१]

अनासक्त और अपरिग्रह : रोग की स्वपरीक्षा

चि — तेरा पत्र मिला। मैं अब कितने पत्र लिख पाऊँगा, यह कहा नहीं जा सकता। पत्रों पर सरकार रुकावट रही है। पत्र यहाँ से निकलते समय जो देर हो रही है वह कायम रहे तो लिखने में मुझे कोई धर्म नहीं मालूम होता। आने वाले पत्र अब मुझे नियमित दिये जाते हैं। जाने वाले पत्रों के बारे में अब तक पत्र-व्यवहार चल रहा है। पत्र न पहुँचे तो समझना मेरी गाड़ी रुकी हुई है। किन्तु उससे घबड़ाने या उदास होने का कारण नहीं है। लिखने देना या न देना सरकार के हाथ में है। कैदी को हक है ऐसा कहकर पत्र लिखने देने की माँग करना मुझसे न होगा। इसमें बिन लिखने को मिले इसलिए कुछ हक पैदा नहीं होता। और जिस वस्तु के बारे में अपना कोई हक नहीं वह अपने हाथ से गई तो उसका दुःख मानने का क्या कारण ?

*Greatest good of the greatest number

तेरे जन्म दिन के बारे में आशीर्वाद मिला हुआ पत्र तो अब तुझे मिला ही। देर से मिला तो क्या ? कदाचित् उससे उसकी कीमत बढ़ी। न मिलता तो उसको अपशकुन मानने का कारण नहीं था। मुझे तेरा पत्र मिलने पर मैं आशीर्वाद न भेजूँगा, ऐसा हो नहीं सकता। दैवी कारण से न मिला अथवा देर से मिला तो अपशकुन कैसे हुआ ? और सच पूछा जाय तो अनासक्त को अपशकुन वगैरह कुछ नहीं है। अतः हमारा नया साल खराब जायगा ऐसा जरा भी मत मानो। हमने कुछ बुरा सोचा कहा अथवा किया तभी साल बुरा जायगा और यह तो अपने हाथ की बात है।

गले में की गाँठें (टॉन्सिल) काटनी चाहिये, ऐसी डाक्टरों की सलाह हो तो कटवा लो। इसमें देर नहीं लगती। उसमें कोई डर है यह भी मैंने नहीं सुना। तेरा शरीर बिल्कुल रोग रहित होना चाहिए। मैं समझता हूँ कि अपने शरीर की जानकारी अधिक से अधिक खुद को ही होती है।

इसी से दिखाई देता है कि रोगी अपने शरीर की पहिचान न रखा तो उसे डाक्टर को ठीक जवाब देते न बनेगा। 'सर में दर्द है' इतना कहने से डाक्टर क्या बतायेगा। दर क्यों दर्द करता है यह रोगी को समझ में आना चाहिए। यही बात बहुत सी बातों में हमें समझने लायक है। यही बात चिकित्सा के सम्बन्ध में। अमुक चिकित्सा का यह परिणाम हुआ यह डाक्टर अपने आप नहीं समझता उसे रोगी पर ही अवलम्बित रहना पड़ता है। किन्तु सभी रोगियों की चिकित्सा का क्या परिणाम हुआ यह पहिचानने में नहीं आता। आहार शरीर की रोज की चिकित्सा है। उसका परिणाम खाने वाले को ही मालूम हो सकता है। अतः जिसे हवा पानी और अन्न का परिणाम समझ में आया वह अपने शरीर पर जितना अधिकार रख सकता है उतना डाक्टर कभी नहीं रख सकते। अतः मैं समझता हूँ कि हम सब को शरीर के बारे में सामान्य ज्ञान प्राप्त कर ही लेना चाहिए। उसी तरह हवा पानी और आहार के बारे में भी इतना ज्ञान प्राप्त करने लायक साहित्य अपने पास है ही। वह सब पढ़ने की

आवश्यकता नहीं। उसमें से थोड़ा समझ लिया कि काम चल जाता।

मैं कुदरत के प्रयत्नों से अपना शरीर अच्छा बना लिया है। मेरे बारे में मैं मानता हूँ कि अपने काम लायक ज्ञान यदि मैंने प्राप्त किया होता तो मैं कभी का समाप्त हो गया होता मेरा टूटा-फूटा शरीर भी मेरे सावधानी के साथ रहने के कारण ही बच सका है। मुझे विश्वास है कि उसमें डाक्टरों का बहुत थोड़ा हाथ है।

ता २४—७—११ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—४१]

विषय म:त्युञ्ज : समासक प्रार्थना

चि — तेरा मान्य ही कृपा कहना चाहिए क्या? मैंने तो तेरे जन्म दिन का आशीर्वाद लौटती डाक से ही भेजा था। किन्तु मेरा पत्र बीच में ही अटकता रह गया। शायद कल रवाना हुआ हो तो नहीं कह सकता, किन्तु पत्र में लिखे आशीर्वाद से क्या होगा? हृदय का आशीर्वाद हो तो बस है और वह तो था ही। हृदय किस प्रकार काम करता है यह हमें समझ में नहीं आता। और सच बात है। बाकी सब कुछ।

नई बहिनें आती हैं। उनमें से जो लिख सकती हों उन्हें मुझे पत्र लिखने को कहो। को ठीक पहिचान लो उसकी कहानी दुःख वाली है।

मेरिकेरक विल्सन के बाबत से मेरा परिचय नहीं। सुना है, वो तो वह भला आदमी था और उसके हेतु अच्छे थे।

गत युद्ध के कारण लाभ हुआ तो नहीं प्रतीत होता। भीति का बल ढीला पड़ गया है। द्वेष बढ़ गया है। लड़ने की वृत्ति कम नहीं हुई लोभ बढ़ा है।

किसी मनुष्य अथवा वस्तु का लक्ष्य कर प्रार्थना हो सकती है। उसका परिणाम भी हो सकता है। किन्तु इस प्रकार लक्ष्य न करके की गई प्रार्थना के आत्मा तथा संसार के लिए अधिक कल्याणकर होने की संभावना है।

भावना का संस्कार स्वयं अपने पर होता है। अतः उससे अन्तरात्मा अधिक जाग्रत होती है। और जैसे-जैसे जागृति बढ़ती जायगी वैसे-वैसे उसके संस्कार का विस्तार बढ़ता जाता है। यह हृदय का विषय है। मुँह से भावना आदि की क्रियाएँ हृदय को जाग्रत करने के लिए हैं। व्यापक शक्ति जो बाहर है वही अन्दर है और उतनी ही व्यापक है। उसे शरीर का अन्तराय नहीं। अन्तराय हम उत्पन्न करते हैं। भावना के योग से यह अन्तराय दूर हो जाता है। भावना के द्वारा इच्छित फल प्राप्त होता है या नहीं यह हमें समझ में नहीं आता। मैंने   की मुक्ति के लिए भावना की और वह दुःख से मुक्त हो गई इससे वह मेरी भावना का ही फल है ऐसा मुझे न मान लेना चाहिए। यह भावना निष्फल नहीं होती किन्तु क्या फल देती है यह हमें समझ में नहीं आता। और हमारा चाहा हुआ फल ही प्राप्त हुआ तो वह अच्छा ही है ऐसा मानना ठीक नहीं। इस जगह भी गीता बोध का अमल करना है। भावना अनासक्त होनी चाहिए। किसी एक के सम्बन्ध में भावना करने पर भी अनासक्त रहा जा सकता है। किसी की मुक्ति हमें इष्ट मालूम हो तो उसके लिए भावना करनी चाहिए। किन्तु मुक्ति प्राप्त हो या न हो उस सम्बन्ध में निश्चिन्त रहना चाहिए। फल विपरीत हो तो भी भावना विफल हुई यह न समझना चाहिए। क्या इससे अधिक स्पष्टीकरण की आवश्यकता है?

उर्दू पुस्तकों की सूची मैंने माँगी है यह ध्यान में रखो। अब यह पत्र तुम्हें कब मिलेगा और तेरा उत्तर कब आयगा यह कुछ निश्चित नहीं। अनिश्चितता में निश्चितता रखने को सीखना यही अपना काम है।

ता. १८—७—३२ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

[पत्र—४२]

क्रोध का परिणाम : व्यक्ति-पूजा नहीं गुण-पूजा : आश्रम : उस प्रेम की कसौटी : संयम बनाम स्वच्छन्दता : 'दूसरों का ध्यान न करो : अंतिम

चि — तेरा पत्र मिला। तेरी भूलता का तो अन्त ही नहीं है। क्रोध में आती है तब अपने को भूल ही जाती है। जिस पत्र में क्रोध के जीतने के व्रत का उल्लेख करती है उसी में क्रोध करती है और वह भी अकारण। मेरे मीठे दोषारोप का कारण ही तेरी समझ में न आया। जो फुलवेदार टुकड़ा तूने कवर पर चिपकाया था उसमें श्रृंगार या कला नहीं थी यह मेरी शिकायत थी। कला के लिए जो अधिक समय देता है मैं उसे दोष न दूँगा। उसमें तो कला थी ही नहीं। कवर पर ऐसी पट्टियाँ चिपकाने में काहे की कला है। और तूने उन्हें चिपकाया भी इस तरह कि आधी निकल गई थी। अतः तेरा क्रोध अविचारी था। मुझे उससे हँसी आई। पास होता तो थप्पड़ ही दिया होता। किन्तु तू इतनी पड़ी उसका क्या? उसमें इतना समय गँवाया। करना नहीं चाहिए, ऐसा तर्क किया और अपना शरीर खराब किया। क्योंकि क्रोध का परिणाम शरीर पर होता है यह भौतिक वैज्ञानिकों ने प्रयोग कर खोज निकाला है। हम लोग भी ऐसा ही समझते हैं। तेरा व्रत टूटा सो अक्षम्य। फिर ऐसा क्रोध मत करना और मेरी आलोचना मीठी आलोचना थी। उसे समझने लायक अक्ल भी तू खो बैठी।

पत्रों को तो गाजर की पुंगी* समझना चाहिए। अतः पत्र न मिलने पर दुःखी न होना चाहिए। यहाँ से पत्र लिखते ही जाना। ठीक हुई तो मैं लिखूँगा। इतनी भी खबर मैं न दे सका तो भी लिखा हुआ व्यर्थ न जायगा।

नये फूलों को मेरा प्रणाम कहो। कभी तो उनमें उनके बीच होने की मुझे आशा है ऐसा कहकर उन्हें धीरज दे।

तू बड़ी अभिमानिनी है। फूलों के आसपास थोड़े से उमादर और साथ

---

*गाजर का बाजा (तात्पर्य बजा तो बजा नहीं तो खिया—दोनों प्रकार लाभ)।

लगाया तो वह बारह मास मिलेगा और शरीर को लाभ होगा। शरीर तेरा नहीं। तुझे सौंपी गई ईश्वर की वस्तु है। अतः उसकी रक्षा के लिए तुझे अवश्य समय देना चाहिए। ऐसे पेड़ों को बहुत सा समय नहीं लगता और जमीन भी थोड़ी लगती है। मेरे एक अंग्रेज मित्र—जो दक्षिण अफ्रीका में मेरे साथ रहते थे—ने बिना परिश्रम के थोड़े ही दिनों में कभी न्हाई जाने वाली 'क्रेस' नाम की तरकारी तैयार कर ली थी।

लड़कियों की बीमारी के बारे में मैंने तुझे लिखा ही है। कोठरी में घुसकर जाँच कर। बारे में मुझे डर था ही। किन्तु उसने तुझे सब कुछ बता दिया है। तो अब उसे जीत ले। अब तेरी कठिनाइयों के बारे में

(१) व्यक्तिपूजा के बजाय गुण-पूजा करना उचित है। व्यक्ति दोष हो सकता है और उसे विनाश है ही गुणों का नहीं है।

(२) आश्रम की बालक-मण्डली में बहुत से लोग अच्छे न लगते हों तो उन्हें सहन करना सीखने के लिए यह सुवर्ण अवसर है। निर्दोष कोई भी नहीं है। और अपनी तरह ही सबको मानने का निश्चय किया कि अच्छे लगने न लगने का प्रश्न ही हट जाता है।

(३) आश्रम के तत्व स्वीकार हों और उसके बाह्य स्वरूप के बारे में मतभेद हों तो उसकी फिक्र करने की जरूरत नहीं। अपना काम 'मम' से (तत्व से) है। रूपरूप से (बाह्य रूप से) नहीं।

(४) तुझे अपने स्वभाव के दोष निकालने के लिए तो आश्रम में रहना धर्म है।

(५) अपने आदर्श तुझे आश्रम में पूर्ण करते न बनेंगे तो वह दोष तेरा है। आश्रम में तो तुझे पूरी स्वतन्त्रता है।

(६) तेरे स्नेहीजनों का खिंचाव तुझे आश्रम के बाहर क्यों ले जाय? उससे तो अपने प्रेम को उन्हें आवश्यकतानुसार वहाँ लाना चाहिए! प्रेम को भौतिक सहवास की आवश्यकता ही न होनी चाहिए। और हो तो वह प्रेम क्षणिक ही कहना चाहिए। शुद्ध प्रेम की एक कसौटी तो दूसरे के वियोग में—दूसरे की मृत्यु के उपरान्त होती है।

किन्तु यह सब दुखदायक हुआ। तेरा हृदय जहाँ हो वहीं तू रहेगी। आश्रम को यदि तेरा हृदय रखते न बनता हो तो मैं भी क्या करूँगा और और तू भी क्या करेगी।

मेरे सूत को साड़ियाँ बुना लेनी हो चाहिएँ। मैंने सूत के विषय में जो विचार प्रदर्शित किये उसके पहले का यह सूत है। तब मैं तो यह बा के लिए ही रखा है। तो उसका उपयोग 'बा' का करना है, मुझे करना नहीं है। 'बा' बहुत मोटी साड़ियाँ पहन ही नहीं सकती। अतः आश्रम की ओर से भी सामान्यतः पतली साड़ियाँ ही मिलती हैं। इस रीति से भी मेरे सूत की साड़ी 'बा' भले ही पहने। किन्तु इसके पश्चात् सूत के बारे में कड़ाई करनी चाहिए। किन्तु यहाँ भी मैं 'बा' पर जबरदस्ती न करूँगा। 'बा' अपनी इच्छा से उसका त्याग करे और उसके हिस्से में जो आवे उस पर उसे सन्तुष्ट रहना चाहिए, यह मेरी इच्छा है। किन्तु यह भविष्य की बात हुई। अभी तो मेरा नया सूत कम नहीं है। चाहे कुछ हो मेरा सूत पड़ा न रहना चाहिए। किसी का भी पड़ा न रहना चाहिए। तुमने लायक सूत इकट्ठा हुआ कि उसका ताना होना चाहिए।

कातती होगी मेरी समझ है। किन्तु मुझे लिखा यह ठीक है। बहुत सी स्त्रियाँ कातना छोड़कर भरने का काम पसन्द करेंगी। जैसा खाने में वैसा काम में। रोटी छोड़कर पकौड़ी की ओर मन दौड़ेगा। रोटी पर स्थिर रहने में संयम है त्याग है। पकौड़ी की ओर जाने में स्वच्छन्दता है। उसी प्रकार कातने पर स्थिर रहने में संयम है। दूसरी ओर जाने में (अपवादरूप) स्वच्छन्दता है।

कभी भी न्याय मत करो अन्यथा दूसरे तुम्हारा न्याय करेंगे। [Judge not lest ye be judged] इस पर तेरी आलोचना मुझे भली नहीं मालूम होती। उसका अर्थ ही तेरी समझ में नहीं आया। नहीं आलोचना में बड़ा अहंकार है। अन्यथा दूसरे लोग तुम्हारा न्याय करेंगे। हम इस तरह के न्यायवाले झगड़े में न पड़ें। संसार के न्याय उलझन में न पड़ें। संसार का न्याय करना ही था करना हो वह भले

ही करें' ऐसे विचार या ऐसे शब्द हम कैसे निकाल सकते हैं। संसार के आगे हम चुप हैं। मतलब यही है कि हम सत्य मार्ग पर हों तो भी संसार को दण्ड देने का भार नहीं लेते। उसका न्याय नहीं करते। बल्कि संसार-द्वारा दी हुई सजा और न्याय चुपचाप सहन कर लेते हैं। इसी का नाम नम्रता या अहिंसा है। तेरा लेख व्यंग से या क्रोध से लिखा गया हो तो भी तू फिर ऐसा न लिखना यह मेरी इच्छा है। मुझ पर तूने जो क्रोध निकाला है उसकी चिन्ता नहीं। वह मैं हँसकर दूर कर दूँ या किन्तु ये शब्द मुझे खटकते हैं। तेरी लेखनी से ऐसे वाक्य न निकलें अर्थात् ऐसे विचार भी मन में न आवें। विचार आ ही गया और इसीलिए वह मेरे सामने रखा गया यह ठीक हुआ। मेरे सामने रक्खा गया इसीलिए तो मैं उसमें सुधार कर सकता हूँ। ये बातें इसलिए नहीं लिखीं कि तू अपने विचार मुझसे छिपा। तू पामाल उदय नम्र बेटी हो वैसे मैं देखना चाहता हूँ। किन्तु मेरी माँग यह तो अवश्य है कि अपने पक्ष के विचारों को तू मन में भी जगह मत दे।

और यह मालिश करने के लिए शारीरिक बल की आवश्यकता नहीं होती, बुद्धि की आवश्यकता होती है......।

अब तू जो पढ़ती है वही लिखती है ऐसा मेरा एक समय ख्याल था। किन्तु आज वैसा नहीं। मरघुल के कुछ लेख लोगों की समझ में आये नहीं और कुछ गलतियों से भरे हैं। जो नियम मनुष्येतर प्राणियों पर लागू होता है वह मनुष्य पर नहीं लागू होता। मनुष्येतर प्राणी और जीवों को मारकर खाते हैं और जीते हैं मनुष्य उससे बाहर निकलने के लिए छटपटाता है। इसमें उसकी अहिंसा है। देह है तब तक सम्पूर्ण अहिंसा तक नहीं पहुँच सकता। किन्तु धारमाम्र से उसने यह अहिंसा बढ़ाई तो वह कम से कम हिंसा के द्वारा अपना (जीवन) निर्वाह करता हुआ अन्य जीवों को जीवित रहने देने की तैयारी में ही मनुष्य की विशेषता है। जैसे मनुष्य बढ़ता है वैसे उसका आहार भी बदलता है। अभी उसमें बढ़ने की शक्ति है। डार्विन के मर्कटपन के पश्चात् दूसरे

बहुत से संशोधन हुए हैं। जो पुस्तक तू पढ़ रही है, वह पुरानी मालूम होती है। पुरानी हो, या नई हो 'अधिक से अधिक संख्या का कल्याण अथवा 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' ये नियम गलत हैं। अहिंसा सबका कल्याण चाहती है। ईश्वर के घर सभी के कल्याण का न्याय होगा। वह कैसे किया जाता है और ऐसे न्याय में मनुष्य का कर्तव्य क्या है, वह सोचना अपना काम है। इस नीति के विरुद्ध नीति सामने रखना अपना काम नहीं। किन्तु यह विषय बड़ा है। मैंने थोड़े में तुझे बता दिया है। अधिक चर्चा करनी हो तो प्रश्न पूछ।

ता० १—७—३२ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

[पत्र—४३]

शरीर पर मन का प्रभाव : ब्रह्मचर्य : नाम-जप की महिमा : विद्याध्ययन का लक्ष्य : कला

चि०—तेरा एक तारीख का पत्र मिला। ब्रह्माजल में होने वाली सर्दी से तू घबरा न गई होगी। लड़कियाँ अच्छी होंगी तो कोई तकलीफ न होगी। और यदि हम अनासक्ति का पाठ पढ़े होंगे तो भी कोई तकलीफ न मालूम होगी। तेरे शरीर-स्वास्थ्य के लिए औरों को केवल बाह्य उपाय ही सूझना आयगा। तेरे अन्तर का तुझी को अधिक मालूम हो सकता है। मनोविज्ञान जानने वालों पर मेरा अधिक विश्वास नहीं। कितना भी सीखा हुआ पण्डित क्यों न हो वह मनुष्य का मन कहाँ तक जान सकेगा। अतः तेरी प्रकृति से मन का जो सम्बन्ध होगा वह तुझे ही समझ लेना पड़ेगा और आवश्यक उपाय करने पड़ेंगे। किन्तु इसी पत्र में तूने ऐसा भी लिखा है कि छोटे-बड़े काम और नींद का या वायरस का परिणाम शरीर पर हुए बिना नहीं रहता। सच तो यह है कि अन्तर और बाह्य दोनों का शरीर-स्वास्थ्य से सम्बन्ध है। बाह्य तत्त्वों के विषय में बेफ़िक्र रहकर कोई भी शरीर को स्वस्थ नहीं रख सके हैं। अतः नींद

विश्राम और काम के बारे में बतायें वह सुनो। मन के बारे में तू खोज कर। बारे को कर, शरीर लोहे की तरह बना......।

अन्तर्नाद का वर्णन नहीं किया जा सकता। किन्तु कई बार हमें ऐसा मालूम होने लगता है कि अंदर से अमुक प्रेरणा हुई है। मैंने जब यह नाद पहिचानना सीखा, वह मेरा प्रार्थनाकाल कहा जा सकता है। अर्थात् लगभग १९०६ के लगभग। तू पूछती है इसलिए स्मरण कर लिख रहा हूँ। और 'अरे, आज कुछ नया ही अनुभव आया' ऐसा मेरे जीवन में नहीं हुआ। जैसे हमारे केश बिना मालूम हुए बढ़ते हैं वैसे ही मेरा आध्यात्मिक जीवन बढ़ा है यह मेरा विचार है।

नाम-जप के द्वारा पाप-हरण इस प्रकार होता है। शुद्ध भाव से नाम जपने वालों में श्रद्धा होती ही है। नाम-जप के द्वारा पापहरण होगा ही इस निश्चय से वह आरम्भ करता है। पापहरण अर्थात् आत्म-शुद्धि। श्रद्धा के साथ नाम जपने वाला थक ही नहीं सकता। अर्थात् जो जीभ से होता है वह अन्त में हृदय में उतरता है और उससे शुद्धि होती है। यह अनुभव निरपवाद है। मानसशास्त्रियों का भी यह विचार है कि मनुष्य जैसा विचार करता है वैसा होता है। रामनाम इस नियम का ही अनुसरण करता है। नाम-जप पर मेरी श्रद्धा अटूट है। नाम-जप की जिसने खोज की, वह अनुभवी था और उसकी यह खोज अत्यन्त महत्व की है यह मेरा दृढ़ विचार है। निरक्षर की भी शुद्धि का द्वार खुला रहना चाहिए। यह नाम-जप से होता है। (देख गीता ९-२२, १०-१०)। माला इत्यादि एकाग्र होने का साधन है।

विद्याध्ययन सेवा के लिए ही होना चाहिए। किन्तु सेवा में अपूर्व आनन्द है। अतः विद्या आनन्द के लिए है ऐसा कहा जा सकता है। किन्तु कोई आज तक सेवा के बिना केवल साहित्य-विलास से अखण्ड आनन्द का अनुभव कर सका है ऐसा सुनने में नहीं आया।

कला का किसी देश के साथ किसी व्यक्ति के साथ ठेका नहीं है। जिसमें छिपाने लायक कुछ है वह कला नहीं है।

प्रत्येक देश को अपने उद्योग-धन्धे की रक्षा करने का अधिकार है और उसका धर्म है।

निराश्रय को आश्रय देना भक्तिशक का धर्म है। निराश्रय 'कौन' यह तो उस-उस परिस्थिति को देखकर ही बताया जा सकता है।

जो बाहर से खराब दिखाई देता है वह अन्दर खराब होना ही चाहिए, ऐसा नियम नहीं है। उर्दू पुस्तकें बाहर से खराब दिखाई देती हैं इससे उन्हें प्रकाशित करने वालों की गरीबी दिखाई देती है। किन्तु उसमें तेल अच्छे नहीं यह कैसे हो सकता है। किस्मी ही में तो है ही। किन्तु यह लिखने में मिठास का प्रश्न क्यों आवे? उर्दू का अध्ययन करना कर्तव्य है अर्थात् उसमें मिठास होगी ही। क्योंकि कर्तव्य में मिठास है। तू कभी-कभी उर्दू सीखने की तकलीफ उठावेगी तो तुझे भी अवश्य मिठास मालूम होगी।

ता० ८—७—१२ बापू के आशीर्वाद
यरवदा मन्दिर

[पत्र—४४]

व्यक्ति-पूजा बनाम गुण-पूजा [illegible] सेवा; मेरे विरोधी; बनाम की नहीं काम की पूजा; [illegible]

चि० — नीचे की पुस्तकें परचुरे शास्त्री के लिए चाहिए। उनमें से जो [illegible] मेजो न होगी उन्हें दूसरी जगह से मँगाऊँगा। [illegible] मथुरा [illegible]। 'परचुरे' शास्त्री आश्रम में थे। बड़े विद्वान हैं। [illegible] में हैं। उन्हें महारोग (कुष्ठ) हो गया है। इसीलिए पुस्तकें देने का जरूरी है। [illegible] काटते हैं। उनकी [illegible] भी [illegible] हुई है। यह बाहर है। पुस्तकें,—(१) Imitation [illegible] Chri[illegible] ( ) Works of Swami Vivekanand (जो हों) ([illegible]) [illegible] N[illegible] (जो हों) (४) Essays of T[illegible] (५) [illegible] (६) यजुर्वेद भाष्य (७)

Dispensation of Keshava Chandra Sen.

तेरा पत्र मिला। मन में आवे तभी मुझे रसीले पत्र लिखना आता है ऐसा तू समझती है? अब याद रख कि ऐसा कुछ नहीं है। कौन-सा पत्र रसीला और कौन-सा सूखा यह भी मेरी समझ में नहीं आता और जो तू रसीला समझती है वस्तुतः रसीला है यह कौन कह सकता है? मालूम होता है कि रसिकता मापने का मापक गज ईश्वर ने अपनी संदूक में ताला लगाकर बन्द कर दिया है। अतः रसिकता की नाप प्रत्येक के पास कुछ कमी ही होनी चाहिए। तेरी माप पूरी करने का मैं प्रयत्न करने लगा तो मेरा दिवाला ही निकलेगा। उसी में मेरा समय जायगा। यह पत्र कदाचित् अरसिक मालूम होगा, ऐसा सन्देह हुआ कि दूसरा फिर तीसरा इस प्रकार लिखता ही बैठूँ? और मुझे जैसे रसीले पत्र लिखने चाहिएँ वैसे ही दूसरों को भी तो। अपना फिर क्या था? ठन् ठन्!! उनकी अपेक्षा मेरा सीधा रास्ता है। रसिक अरसिक इसका विचार ही न करते हुए जो मन में आवे वह आवे वैसी भाषा में लिख फेंकना। किन्तु तू ठहरी मूर्ख और उस पर अभिमानिनी। इतनी सीधी बात तेरी समझ में थोड़े ही आवेगी। और अब तो मैं देखता हूँ कि तू सर्वज्ञ होने का दावा कर रही है। जो समझदारी की बात लिखी वह तुझे मालूम ही है ऐसा दिखाई देता है। किन्तु जरा रुक जो 'मैं सब समझता हूँ' ऐसा समझते हैं किन्तु उस पर अमल नहीं कर सकते उनकी समझ में कुछ नहीं आता और आता है तो उनसे मालूम नहीं होता। अतः मेरे विचार से तो जब तक तू उलटा-सीधा लिखेगी, क्रोध करेगी, अभिमान करेगी तब तक मूर्ख ही रहेगी। इसका अर्थ यह नहीं कि अभिमान क्रोध और वासनायें छिपाकर मिलना चाहिए। तेरे पत्रों का मूल्य तू जैसी है वैसी दिखाई देने में है। बालकी रही तो बच जायगा। किन्तु क्रोध निकाल ही देना चाहिए और अभिमान थोड़ा कम करना चाहिए। एकदम निकाल देना लगभग असम्भव है। नारद मुनि का उदाहरण देती है किन्तु उनके वचनों का

रहस्य तुझे कहाँ मालूम है ? उनकी तरह व्यक्ति-पूजा ज़रूर करना। यह करना ठीक है। जैसे वैकुण्ठ-भगवान ऐतिहासिक वैसे ही उनके कृष्ण। नारद मुनि के भगवान् उनके कल्पना-मन्दिर में विराजमान थे। वे नारद मुनि व्यास भी हैं और उनका कृष्ण भी है। क्योंकि ये दोनों अपनी कल्पना में ही हैं। मेरे विचारों से इतिहास की अपेक्षा कल्पना का स्थान ऊँचा है। तुलसीदास ने कहा कि राम की अपेक्षा नाम बड़ कर है, इसका यही अर्थ हो सकता है। तू व्यक्तिपूजा के चक्कर में पड़ी है, इसलिए मुझे चिन्तित कर रही है न ? आश्रम के बारे में तू मुझे निर्भय नहीं कर पाती। कर पाया है। ऐसे दूसरे उदाहरण भी दिखाये जा सकेंगे। ये भी व्यक्ति-पूजक हैं। कौन नहीं है ? किन्तु अन्त में ये व्यक्ति के पर उनके गुणों के अर्थात् कृति के ही पुजारी बनते हैं। इस अमूल्य बात को भूलकर हम लोगों ने अपनी मूर्खता से स्त्रियों को सती होना सिखाया, यह व्यक्ति-पूजा की पराकाष्ठा है !! किन्तु पत्नी का धर्म तो यह है कि वह पति का काम अपने में अमर करे। पति पत्नी में से विकार तथा नर-नारी जाति भेद निकाल देने पर यह आदर्श समस्त संसार पर चाहे जिस परिस्थिति में लागू किया जा सकता है। इसी का अर्थ यह है कि प्रेम ईश्वर में जा मिलता है। किन्तु अब यह विषय यहीं छोड़ देता हूँ।

तू के आने की खबर सुनकर इतनी घबराई क्यों ? उसे भी ठिकाने पर लाने की हिम्मत रख, उतना विश्वास रख। प्रेम सब कुछ जीतता है यह अमर वाक्य हृदय में जमने दे। कोई भी आवे, प्रसन्न रहना ही अपना धर्म है। अपने से जो हो उतनी सेवा करते रहना है न ? तू ऐसा विचार क्यों नहीं करती कि बापू के लड़के सुधरे हों तो सुधरेगा ही। ऐसा भी सम्भव है कि वह अब समझदार हो गया होगा। मुझे उससे बहुत आशा है।

लड़कियों की सेवा करते करते तुझे पानी हो जाना चाहिए। लड़कियाँ यदि किसी से खुलकर बातें न करेंगी तो वे सब बीमार हो पड़ जायँगी। को लिखा हुआ मेरा पत्र पढ़ और यदि वह उस पत्र को देखे के

लिए तैयार हो तो समझदार लड़कियों को पढ़कर सुना दे ।

केले में वायु उत्पन्न करने का गुण तो मैंने कभी अनुभव नहीं किया । मेरे इतने केले शायद ही किसी ने खाये होंगे । बहुत साल तक यह मेरा मुख्य आहार था । दूध नहीं, रोटी नहीं केवल केला और आलिव आयल (जैतून का तेल) उसी तरह मूँगफली और नींबू किन्तु वायु का नाम नहीं । बहुत सालों के बाद फिर आजकल खा रहा हूँ । किन्तु कोई बुरा परिणाम नहीं दिखाई देता । उसका एक नियम ही है । एक तो केला पकाना चाहिए या वे एकदम पके होने चाहिएँ । कच्चे केले में केवल स्टार्च होता है । स्टार्च बिना पकाये न खाना चाहिए यह मैंने • के प्रयोग में देखा । अतः केला मुलायम न लगा पका न मालूम हुआ तब तक न खाना चाहिए । दो-तीन दिन वैसे ही रखने से वे पक जाते हैं । खाने की जल्दी हो तो सेंकना या उबालना चाहिए ।

मेरा विरोध करने वाले पहले भी थे और आज भी हैं । तो भी मुझे उनके बारे में क्रोध नहीं है । स्वप्न में भी मैंने उनका बुरा नहीं सोचा । अतः बहुत से विरोधी मेरे मित्र बन गये हैं । किसी का भी विरोध आज तक मेरे सामने टिक न सका । तीन बार तो विरोध करने वालों ने मुझ पर हमला भी किया तो भी मैं अब तक बचा हूँ । इसका अर्थ यह नहीं है कि विरोधियों को ईप्सित सफलता कभी मिलेगी ही नहीं । मिले या न मिले मुझे उससे मतलब नहीं । मेरा धर्म उनका भी हित साधना और समय पड़ने पर उनकी भी सेवा करना है । इस सिद्धान्त का मैंने यथाशक्ति आचरण किया है । यह मेरा स्वभाव ही है ऐसा मुझे मालूम होता है ।

हजारों लोग मेरी पूजा करते हैं तब मुझे घबराहट-सी होती है । इस पूजा से मुझे मिठास मालूम हुई हो अथवा उससे मैं उस पूजा के योग्य हूँ ऐसा मुझे मालूम हुआ हो यह कभी न हुआ । किन्तु मेरी अयोग्यता की जानकारी मुझे रही है । मुझे याद नहीं आता कि कभी सम्मान की भूख मुझे लगी हो । किन्तु काम की भूख अवश्य है । सम्मान देने वालों से काम लेने के लिए मैं छटपटाया हूँ और जिन्होंने काम नहीं दिया

उनके सम्मान से दूर भागा हूँ। मुझे जहाँ पहुँचना है वहाँ जब मैं पहुँचूँगा तभी कृतार्थ होऊँगा। लेकिन ऐसा दिन कहाँ जब मित्रों के बीच मैं खड़ी।'

दुनिया के विरुद्ध खड़े रहने की शक्ति प्राप्त करने के लिए औद्धत्य या उच्छृंखलता अपने में लाने की आवश्यकता नहीं है। ईसामसीह दुनिया के विरोध में खड़े रहे, बुद्ध भी अपने युग के विरोध में रहे, प्रह्लाद ने भी ऐसा ही किया। वे सब विनय की मूर्तियाँ थीं। इसके लिए आत्म-विश्वास तथा प्रभु पर श्रद्धा चाहिए। औद्धत्य से विरोध करने वाले अन्त में गिरे हैं। तेरा औद्धत्य और तेरा क्रोध कई बार तो ढोंग होता है। किन्तु यह ढोंग भी बुरा है। क्रोध अन्त में आदत का रूप धारण करता है और बहुत बार बेकार ही गलत ख्याल का कारण होता है। ऐसा न हो इसलिए मनुष्य को बहुत सावधान रहकर चलने की आवश्यकता है। अन्त समय में एकाकी खड़ा रहने की शक्ति आध्यात्मिक नम्रता के बिना असम्भव मालूम होती है। और यह शक्ति आई हो तभी वह सच्ची नम्रता है। उसकी जाँच उसी में है। बहुत से बहादुर गिने गये लोग सच मुच वैसे थे या नहीं यह जाँचने का अवसर ही समाज को नहीं मिलता है।

ता० १८—८—३२ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मन्दिर

[पत्र—४५]

अभिमान और नम्रता ; लोकमत ; लोकमर्यादा

चि०— तेरा पत्र मिला। राखी मिली। दो दिन देर से। किन्तु मैंने तो यह सोमवार को ही मिली ऐसा मान लिया।

वेष यदि अनुकूल न हो तो जबरन पहनने से कोई लाभ नहीं। प्रत्येक वेष की कुछ विशेषता होती ही है।

तेरे क्रोध का विश्लेषण ठीक ध्यान में आ गया। तू क्रोध को जीत ही लेगी, ऐसा मुझे मालूम होता है।

छूट की कुछ आवश्यकता हो वह न बताना, यह बड़ा अभिमान और अन्याय है और उससे अपने प्रियजनों पर बड़ा बोझ पड़ता है। विनय और निरभिमान यह अपनी आवश्यकता जानने के दुःख से प्रियजनों को बचाता है। यह नियम का पहला पाठ है। अब सीख लो।

लोकमत माने जिस समाज के मत की हमारे लिए कीमत है उसका मत। वह मत नीति के विरुद्ध न हो तब तक उसे सम्मान देना अपना धर्म है। (राम ने धोबी के शब्द सुनकर सीता का परित्याग किया) इस धोबी की कथा से शुद्ध निर्णय करना कठिन है। आज हमें तो वह जरा भी अच्छा न लगेगा। ऐसी टीका सुनकर अपनी पत्नी का त्याग करने वाले को निर्दय और अन्यायी ही कहना चाहिए। किन्तु रामायण में कवि यह प्रसंग किस दृष्टि से लाया है यह मैं न बता सकूँगा। हमें इस झंझट में पड़ने की जरूरत नहीं है। कम से कम मैं तो झंझट में न पड़ूँगा। रामायण की तरह पुस्तकें भी मैं इस दृष्टिकोण से नहीं पढ़ता।

लड़कियों के साथ मेरे खुलेपन के व्यवहार से आश्रमवासियों को धक्का लगता हो तो वह खुलापन मुझे छोड़ देना चाहिए, यह मेरा मत है ही। यह छूट लेने का कोई स्वतंत्र धर्म नहीं और न ही उसमें कोई नीति विरोध नहीं होता। किन्तु ऐसी छूट न लेने से लड़कियों पर बुरा परिणाम होता हो तो मैं आश्रमवासियों को समझा लूँगा और छूट ले लूँगा। लड़कियों में ही भूल न होता हो क्या करना यह देखना मेरा काम है। मैं जो छूट जिस तरह लेता हूँ उसकी नकल किसी को करना उचित नहीं है। वह स्वभावतः होना चाहिए। 'आज से मैं छूट लूँगा' ऐसा विचार कर कृत्रिमता से कोई छूट नहीं लेगा। और यदि किसी ने ली तो उसे भयंकर कहना चाहिए।

मुख्य बात तो यह है कि विकारों के अधीन होकर अत्यन्त निर्दोष मालूम होने वाली छूट भी जो कोई लेता है वह गड्ढे में गिरता है और दूसरों को भी गिराता है। अपने समाज में स्त्री-पुरुषों का सम्बन्ध स्वाभा- तक नहीं हुआ है तब तक अत्यन्त सावधान होकर चलने की आवश्य

मेरी कल्पना है कि • पूज्य ब्रह्मचारिणी है। उनकी से मिलता है। उनमें भी भावना है। और तुमें की तटस्थता के बारे में लिखा इसलिए मुझे इतना लिखने की प्रेरणा हुई। की मैंने ठीक पहिचाना है ऐसा मुझे मालूम हुआ और यह काम उसकी शक्ति के बाहर का नहीं है ऐसा मुझे मालूम हुआ तो चाहे वह पत्र उसके पास भेज दे। यह उसकी शक्ति के परे अथवा क्षेत्र के बाहर मालूम हो तो इतना मेरा मूल था। गुरु प्रेम का भूखा है। किन्तु उसमें पर्सदगी और नापर्सदगी भरी हुई है। थोड़ों पर ही वह प्रेम कर सकता है। इससे वह मन ही मन कुढ़ता रहता है। ऐसे आदमी को पत्नी की आवश्यकता कम होती है। पत्नी में तो वह लिपट जा सकता है। ऐसे आदमी को विकारहीन बहिन चाहिए। वह मिली तो ही उसका ठीक चल सकता है। अपनी स्त्रियाँ यह गुण अपने में नहीं लातीं। वे पत्नी हो सकती हैं बहिन नहीं। बहिन होने के लिए बड़ी त्यागवृत्ति की आवश्यकता होती है। जो पत्नी होती है वह पूर्णतः बहिन हो ही नहीं सकती; यह स्वयंसिद्ध है ऐसा मुझे तो मालूम होता है। सभी बहिन समस्त संसार की बहिन हो सकती है। किन्तु पत्नी अपने को एक ही पुरुष का समर्पित करती है। पत्नी गुरु की आवश्यकता है। किन्तु वह शीघ्रता नहीं पकड़ता। क्योंकि उसमें विकारों की शान्ति के लिए स्थान है। संसार की बहिन होने का गुण कष्टसाध्य है। जिसमें ब्रह्मचर्य स्वभावसिद्ध है और जिसमें सेवा मात्र उत्कृष्ट स्थिति को पहुँच गया है वही बहिन हो सकती है ... तु गुरु ऐसी भावना बहिन हो जा यह तेरा मेरा प्रयत्न है ही। काम कठिन है किन्तु प्रभु को जो करना होगा वह करेगा।

—जन्माष्टमी के दिन तू आश्रम में पहुँची, यह ठीक हुआ। बाद रस्ते क्रोध को जीत। तेरे साथ आने के लिए तैयार ही नहीं हुआ यह मुझे मालूम है? उस पर क्रोध मत कर। वह लड़का है। तू लड़का नहीं है। उस जीतने में तेरी विजय है। उसे न जीतने में तेरी पराजय है।

तुम्हारी माँ-बाप की पर्वा या कौन लेगा? हम रहा, तब माँ-बाप

को कैसी स्थिति थी कौन बता सकता है। अतः मैं समझता हूँ कि 'अच्छे का फल अच्छा ही' इस निरपवाद नियम को सदा किये चले मे ही सार है। हर वक्त अमुक व्यक्ति के बारे में यह नियम सिद्ध करते न बना तो उसका कारण अपना अज्ञान नियमों की अपूर्णता नहीं।

भाग्य को मैंने माना तो भी वह मिथ्या करने लायक नहीं है। भाग्य माने पूर्व कर्मों का परिणाम।

वेश्याओं का उद्धार करने के लिए पुरुषों को पवित्र होना चाहिए। जब तक मनुष्य पशु-सृष्टि में रहेगा तब तक वेश्याएँ भी रहेंगी। वेश्याओं ने अपना व्यवसाय छोड़ दिया और वे सुधर गईं तो उनसे 'कुलीन' कहे जाने वाले पुरुषों को अवश्य विवाह करना चाहिए। 'एक बार वेश्या तो सदा वेश्या' यह नियम नहीं है।

सेना के सिपाहियों के लिए लड़कियों को भगाया जाता है यह विचार मुझे अवास्तव प्रतीत होता है। व्यवस्थित राज्य में ऐसा होने की जरा भी सम्भावना नहीं।

ता० २६—८—३२ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मंदिर

[पत्र—९७]

आश्रम और शिक्षित स्त्रियाँ : प्रभु में विश्वास

चि० — इस समय तुझे कौन सा नया विशेषण दूँ सूझता नहीं है। तू जो माँग वही दूँ।

मुझे नहीं मालूम होता कि वे दो स्त्रियाँ आने के कारण हम यह कह सकते हैं कि अब पढ़ी-लिखी औरतें आने लगीं। ऐसा कहा जाय तो बीच-बीच में कोई-न-कोई पढ़ी-लिखी स्त्री रास्ता भूलकर आ जाती है। किन्तु उनमें से एक का भी हम आश्रम में संग्रह न कर सके। तुझे पढ़ी-लिखी माना और तेरा संग्रह किया है ऐसा मानें तो अलग बात है।

किन्तु यह एक अपवाद हुआ। एक चिड़िया आई कि गर्मी आई, ऐसा थोड़े ही माना जायगा।

के बारे में मैं दुःखी हूँ। उसे वश से छुट्टी दी यह ठीक हुआ। किन्तु उसे भूल मत जाना। उस पर नजर रखकर उसे सीधे रास्ते ला सको तो लाओ। के बारे में तेरी अड़चन मेरी समझ में आती है। यदि तुझमें उदारता और हिम्मत आवे तो उसके बारे में उसके माँ-बाप से तुझे बातें कर लेनी चाहिएँ और उसके हित का कोई रास्ता निकालना चाहिए।

——अपने रास्ते में खुद काँटे बोता है और वे गड़े तब शिकायत करता है। अपनी खुद की शक्ति पर हम विश्वास कर रहे हों तो शायद हम सफल न होंगे। किन्तु ईश्वर की शक्ति पर विश्वास करें तो घने अँधेरे में भी प्रकाश दिखाई देगा। मुझमें प्रेम हो तब तो ! कहकर तूने पीठ फेर ली तो मेरा कथन निरर्थक है। और 'आपमें प्रेम है यह समझने पर भी आपको गड्डों को खींचते क्यों न बना ? फिर मुझे कहने का आपको क्या अधिकार ?' ऐसा कहकर तू अपना हृदय-द्वार बन्द कर लेगी तो भी मैं लाचार बन जाऊँगा। अपनी अपूर्णता मैं मंजूर करता हूँ। तू उसका क्यों अनुकरण करती है ? अपने अनुभवों से मैं तुझे जो देता हूँ तू उसका उपयोग कर। साथियों के दोष लेकर रखने नहीं होते, वे दोष भुलाने होते हैं और उनके जो गुण हों उन्हें ग्रहण करना होता है। और मैं तेरी तरह हिम्मत हार कर बैठता नहीं, कठोरतम हृदय को भी पिघला देने की मुझे उम्मीद है अतः मैं प्रयत्नशील रहता हूँ।

तू भोजनगृह में समाचारपत्र पढ़कर सुनाती होगी या हँसी-मजाक करती होगी तो मैं यह बुरा ही कहूँगा। भोजनगृह में मौन ही रहना चाहिए, वहाँ पढ़कर क्या सुनाया जाय ?

——तेरा पढ़ना भी गंभीरतापूर्ण कम से कम भोजनगृह में तो, होना चाहिए। अतः इतना सुधार कर डाल। यदि तू भोजनगृह में हँसी मजाक करने लगी तो लड़कों का क्या होगा। और वे सब यदि तेरी तरह करने लगें तो भोजनगृह बंदरों का बगीचा हो जायगा और अनुशासन टूट जायगा।

के और तेरे हाथ में। तेरे पत्र जैसे आते हैं वैसे ही मुझे चाहिएँ। सु कृमिम हुई तो मेरी दृष्टि से बेकार हो गई। तेरे अन्दर मैं दोष हैं वे जैसे-जैसे दिखाई दें वैसे-वैसे (उन्हें) निकालने का प्रयत्न करूँगा। किन्तु मैं भी निकालने वाला कौन? यह काम एक आदमी के बस का नहीं। भगवान मुझे जितने अंशों में करने देगा उतने अंशों में मैं कारण होऊँगा। मेरा उसमें स्वार्थ है। क्योंकि तेरे द्वारा मुझे बहुत-सा काम करा लेना है। तुममें मैं जो भर रहा हूँ वह व्यर्थ ही जायगा ऐसा मुझे मालूम होता तो इतना बड़ा पत्र लिखने की तकलीफ क्यों उठाता?

किसी व्यक्ति अथवा समाज की अवनति का सब कारण आज तक खोजा गया है ऐसा सुनने में नहीं आया। अनुमान बहुत-से किये जा सकते हैं। तात्कालिक कारण भी मिलता है। और वह हमेशा एक नहीं हुआ करता। किन्तु सामान्यतः ऐसा कहा जा सकता है कि अवनति के मूल में धार्मिक न्यूनता होती ही है। गुलामी कभी मूल कारण नहीं हो सकती क्योंकि वह स्वयं और कारणों के कारण—अनेक प्रकार की दुर्बलताओं के कारण आती है।

पड़ोसी का कर्तव्य अपने पड़ोसी को हमेशा धार्मिक पद्धति से मदद करना है।

अहंकार का बीज शून्यता के अनुभव से ही नष्ट होगा। एक घड़ी तक कोई अन्दर में गहरे उतर कर विचार करेगा तो उसे अपनी अति लघुता मालूम हुए बिना न रहेगी। पृथ्वी से तुलना करते हुए जन्तुओं को जैसे हम तुच्छ समझते हैं उससे भी हजार गुना बड़े परिमाण में इस संसार से तुलना करते समय मनुष्य तुच्छ है। बुद्धि होने से उसमें कोई अन्तर नहीं पड़ता। उसका बड़प्पन अपनी क्षुद्रता का अनुभव करने में ही है। क्योंकि अनुभव पूरा होते ही दूसरा यह ज्ञान उत्पन्न होता है कि जैसे वह स्वरूप के कारण क्षुद्र है वैसे ही परमेश्वर का क्षुद्रतम अंश होने पर भी परमेश्वर में उसका लय हो जाता है अतः वह परमेश्वर-स्वरूप है और इस सूक्ष्म अणु में भी परमेश्वर की शक्ति भरी हुई है।

मायावाद मैं अपने ढंग से मानता हूँ। जगत् में यह जगत् माया है किन्तु जिस दशा में उसका अस्तित्व है उस दशा तक वह है ही। मैं अनेकान्तवाद मानता हूँ।

यदि कोई एक वस्तु मनुष्य के सामने प्रत्यक्ष है तो वह मृत्यु ही है। ऐसा होने पर भी इस अनिवार्य प्रत्यक्ष वस्तु से डर मालूम होता है यही बड़ा आश्चर्य है। यही ममता है, नास्तिकता है। उसे पार कर जाने का धर्म अकेले मनुष्य को ही प्राप्त है।

पाप और पुण्य यह मृत्यु के अनन्तर भी जीव के साथ ही जाता है। जीव बीज रूप से उसे भोगता है। फिर वह दूसरे स्थूल शरीर में हो अथवा सूक्ष्म शरीर में उसमें इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता।

ता० ११—९—३२ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मन्दिर

[पत्र—४९]

आश्रम और धन व्यय

चि०—— तेरा पत्र मिला। उसका समाचार अच्छा दिया है। का काम कठिन है। तुम पर उसकी श्रद्धा है। कुछ कर सको तो देखो। वह भोली है उसका हेतु शुभ है किन्तु बहुत विह्वल और अव्यवस्थित मन वाली है। प्रेम से जो करते बने करो।

ने क्षमा माँगी, अच्छा किया। अब उसे नियन्त्र रखना। सम्भव हो तो रख। वह बहुत चतुर है इतना तो मैंने देखा है ही। अपनी चतुरता का अच्छा उपयोग करेगा तो कितना अच्छा होगा।

आश्रम का पैसा जिसके उपयोग में आना उचित है उसके लिए लाया जाता है। फिर वह कोई भी हो। किन्तु आलोचना तो चाहे जिस कार्य की हो सकेगी। गलतियाँ होती होंगी किन्तु आश्रम का हेतु हमेशा तटस्थता से कार्य करने का होता है।

आश्रम के पैसे-पैसे का खर्च देखने का लोगों को अधिकार है। आश्रम व्यापारी संस्था नहीं है। काम ही उसके खर्च की मर्यादा है। आश्रम के पास कौड़ी भी न हो तो चल जायगा। करोड़ मिले तो भी वह खर्च कर देगा। देने वालों को वही प्रेरणा देता है।

मैं समझता हूँ कि कोई भी व्यक्ति आश्रम से बाहर जावे तो उसे मन्त्री से आज्ञा लेनी चाहिए।

ता० १५—१—१२ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मन्दिर

[पत्र—५०]

आश्रम|भार विनय : भावना

चि० — अब मुझ पर इतना बोझ आ पड़ा है कि आश्रम को लम्बे पत्र भेज सकूँगा या नहीं इसमें सन्देह है। मेरे लम्बे-चौड़े पत्र अब समाचारपत्रों में पढ़ेगा तब तुझे संताप होगा यह मैं जानता हूँ।

दिवाली के दिन के प्रणाम पढ़कर वहाँ उड़कर आऊँ ऐसा मन में आया। किन्तु देखता हूँ कि पिंजड़ा ऊपर से और इधर-उधर से बन्द ही है, पंख फड़फड़ा कर चुप हो बैठा।

तेरी जिम्मेदारी बढ़ती जा रही है यह मैं समझता हूँ। ईश्वर तुझे सँभाल लेगा। तू आत्म-विश्वास न गँवा बैठना।

तू मक्खन बढ़ाकर यदि अच्छी हो गई तो मैं उसे सस्ती दवा समझूँगा।

तुझे इतना ही बताना है कि धीरज न छोड़। लड़कों के विषय में विनय का ही उपयोग करना चाहिए। आश्रम में पढ़ने वालों से गुजराती की कि तुरन्त 'अपना रास्ता पकड़ो' ऐसा कहना अत्यन्त अपमानकारक है। ऐसा किसी से मत कहना———।

हमारा (राष्ट्र) गीत हमें शोभा देने लायक ही है। सपनों का विश्लेषण मुझे करते नहीं बनता।

...भावना कब प्रगट की जाय इसका एक नियम नहीं है। मैं कहूँगा कि सत्यनारायण जब प्रेरणा करें तब प्रगट करनी चाहिए।

ता १—११—३२ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मन्दिर

[पत्र—५१]

भावना का विश्लेषण : सत्य और व्यवहार

चि — आज भी छोटा ही पत्र। आजकल हरिजन भाई-बहिन बहुत समय लेते हैं।

......मेरी भावना के विषय में तू पूछती है। उसमें से कुछ निकल सकेगा यह नहीं मालूम होता। क्योंकि किसी को भी उसकी हुई भावनाओं का पूरा विश्लेषण करना नहीं आता।

जब सत्य आचरण में उतरता नहीं दिखाई देता तब समझना चाहिए कि हमने सत्य ठीक नहीं पहचाना। शुद्ध सत्य आचरण में आना ही चाहिए। सम्पूर्णता कोई भी सत्य आचरण में आ ही नहीं सकता। किन्तु जो आचरण सत्य के निकट नहीं आता वह अशुद्ध और त्याज्य है।

ता ११—११—३२ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—५२]

आश्रम और आहार : प्रतिज्ञा-पालन में ईश्वर का अनुग्रह

चि०— तेरा पत्र मिला। जिनकी समझ में संयम का सूक्ष्म आया होगा उन्हें तो आहार का परिवर्तन अच्छा ही लगेगा। आश्रम में तेल का भोजन शुरू किया गया है यह समाचारपत्रों में किसने दिया। यह बात

सच हो तो हर्ज नहीं। किन्तु हम तो घी, दूध इत्यादि बहुत-सी चीजें लेते हैं। ऐसा होने पर भी केवल का भोजन शुरू किया है ऐसा कैसे कहा जा सकता है? इस मत के आधार का पता लगे तो लिखना।

तेरी शिकायत सच है कि सब नियम को मैं ही बनाता हूँ और जितने जन आश्रम में आते हैं उनका कारण भी मैं ही हूँ। मैं तो बता ही चुका हूँ कि इसका विरोध कर आप सब इसका प्रतिकार कर सकते हैं। और (अपनी) ताकत के बाहर होने वाले किसी को भी आश्रम में लेने के लिए आप बाध्य नहीं हैं। मैं केवल सलाह ही दूँगा। आश्रम में जाना न जाना केवल आप लोगों के हाथ में है। इतना मुझे अवश्य मालूम होता है कि खुद अपने नियमों का पालन करते हुए भी अनियमित ऐसा कोई आता तो उसे बचा लेने की उसके विषय में उदारता दिखाने की शक्ति हममें होनी चाहिए।

छोटी-बड़ी जो प्रतिज्ञा हम करें उसका पालन कर सकें तो वह ईश्वर का अनुग्रह है इसमें सन्देह नहीं।

ता २७—११—३२ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—५२]

पत्रों की गोपनीयता; मानव ईश्वर का प्रतिनिधि है

चि —, को तेरा पत्र पढ़ने न दिया जाय' इस तेरी निषेधाज्ञा का मैंने सम्मान किया है। किन्तु निषेधाज्ञा उन्हें पढ़कर सुनानी पड़ी। मैं मानता हूँ कि उनके बारे में तूने जो लिखा है वह उन्हें मालूम न हो ऐसी तेरी भी इच्छा न होगी। अतः उतना ही भाग पढ़कर दिखाया और बाकी मत पढ़ो यह बताया। किन्तु तेरी निषेधाज्ञा मुझे पसन्द नहीं है। आश्रम का एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से कोई बात क्यों छिपावे? छोटी लड़कियों में ऐसी इच्छा हो, परन्तु बड़े आदमी को भी ऐसा मालूम हुआ तो वह एक समझने लायक बात है। किन्तु तुझे छिपाने का क्या कारण है? तेरे पत्र दूसरे ने पढ़े तो उसकी पवित्रता कम नहीं

होगी। तेरे विचार ईश्वर को मालूम हुए तो उसमें तुझे संकुचित होने की आवश्यकता नहीं। हमें गुप्त विचार करने के लिए अधिकार नहीं है। ऐसी आदत लगाने से विचारों पर अपना अंकुश आसानी से रख सकता है। मनुष्य मात्र ईश्वर का प्रतिनिधि है। ईश्वर को तो अपने सब विचार समझ में आ ही जाते हैं। किन्तु वह हमें प्रत्यक्ष दिखाई नहीं देता इसलिए हम ठीक तरह पहिचानते नहीं कि वह हमारे विचार जानता है। किन्तु मनुष्य को उसका प्रतिनिधि समझकर पहचाना कि उसे अपने विचार मालूम होने का संकोच न होना चाहिए। और वह प्रतिनिधि प्रत्यक्ष है इसलिए अपने विचारों पर अपना अंकुश आसानी से रहता है। तू समझदारी से अपनी निषेधाज्ञा वापस ले ले, यह मैं चाहता हूँ।

(मुझे आशा थी कि बायें हाथ से लिख सकूँगा। किन्तु अब दिखाई देता है कि वह हाथ उपयोग में न लाना चाहिए। अतः मन में है उतना सब शायद लिखा न जा सकेगा)

वविन के बारे में तेरे मन में आया वह तूने लिखा है तो हर्ज नहीं। तू जो लिखेगी वह द्वेष की भावना से नहीं, इतना उसे मालूम है ही। तू अस्पताल से जल्दी लौट आई, ऐसा प्रतीत होता है। डाक्टर की सूचनाओं का पूर्ण पालन करती है तो कोई हानि नहीं हो सकती।

की कथा सुन्दर है। का पत्र समझे बिना के दोष निकालने के लिए मैं तैयार नहीं। स्वच्छ है। निर्दय नहीं, अपना धर्म जानने वाला है। अधिक समय मिलता तो अधिक समझाता। तुमसे हो सके तो तू की सेवा कर। वह यदि अकेली पड़ी हो तो उसमें उसका दोष कम नहीं। किन्तु इस दोष के कारण भी उसकी सेवा करने में हमसे कमी न होनी चाहिए। उसमें गुण भी बहुत से हैं।

को कुछ समझता नहीं। वह भोला और विलासी है। मैंने उसके पिता को लिखा है कि आप उसे पास रखिए।

ता० २८—११—१२ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मंदिर

[पत्र—५४]

चिन्ता कल्पना की प्रजा है; क्रोध-विष; अपनी परीक्षा

चि० — तेरा पत्र आने से मैं चिन्ता से मुक्त हो गया। चिन्ता भी कल्पना की ही प्रजा (सन्तान) है। पत्र आया नहीं तो चिन्ता क्यों, और आने से मुक्ति क्यों? इसका स्पष्टीकरण तूने मुझसे पूछा तो वह मैं न कर सकूँगा और करना ही हुआ तो कहूँगा कि 'इसका नाम मोह है।

तू मुझे पागल-सी कुछ भी लिखती है इसका मुझे दुःख नहीं मालूम होता। किन्तु मुझे तेरी गलती मालूम हो और वह मैं न बताऊँ तो मैं तेरा हितेच्छु साथी मित्र या पिता न रहूँगा। मुझे यह आश्चर्य मालूम होता है कि मैं शुद्ध भावना से जो बताता हूँ उस पर तुझे क्रोध क्यों आता है? तू मुझे धन्यवाद क्यों नहीं देती? अपने बारे में अपने साथी के मन में जो आवे वह उसने बताया तो क्या हमें उसे धन्यवाद न देना चाहिए? मैंने तो यह पाठ बचपन से ही सीखा है। इतना तू मुझसे सीख ले। मेरी परीक्षा झूठी हो तो मैं क्षमा का पात्र हो जाऊँगा। तुझे क्या दोनों ओर से लाभ ही होगा। क्योंकि जिससे तू छूट गई है उसे और अच्छी तरह पहचान सकेगी। मेरे दोष, मेरा कच्चापन तुम सब पूर्णतः जान लो, ऐसी मेरी इच्छा है। और वह दिखाने का मेरा हमेशा प्रयत्न है। अपने विचार मैं छिपाना नहीं चाहता। उन्हें लिखने की शक्ति मुझमें आई तो मैं उन सब को लिख डालूँगा। किन्तु वह सम्भव नहीं यह मैं जानता हूँ। विचारों की गति का माप ले सकने वाली एक भी शक्ति संसार में है ऐसा मुझे तो सम्भव नहीं मालूम होता। कोई विचार नापने का यंत्र खोज निकाले तो मालूम हो सकेगा। इतना लिखते हुए भी मेरे विचार अमारह के पाँच-सात चक्कर लगा आये।

अपने में विष है या नहीं इसकी परीक्षा हमसे करते ही बनेगी यह नियम नहीं। इसे तू भी स्वीकार करेगी। विष जमा कर रखने की इच्छा न होगी तो उससे विष न होगा, ऐसा भी नहीं है। वह अपने पर

अनिच्छया आक्रमण करता है। जिसमें क्रोध है उसमें विष है ही, यह बात शायद तुझे मंजूर न होगी। यह तुझे मंजूर न हो तो (मानना पड़ेगा कि) विष का अर्थ हम दोनों एक नहीं करते। 'बा' ने मुझे कई बार विषैला माना है, यह मुझे स्मरण है। मैं उसका अभियोग कैसे अस्वीकार करूँ। मुझे अपनी बातों में विष मालूम न हुआ तो क्या? वह उसे लगा इतना मुझे बस होना चाहिए। जो वचनों से पूर्णतः सत्य और अहिंसामय है वह कभी किसी का द्वेष न करेगा, अथवा द्वेष की तरह मालूम होना अशक्य चीज है। किन्तु वैसे अनुभव होने वाला ही पीछे से उनमें का अमृत ग्रहण करता है।

तू सब चीजों में खुद की परीक्षिका मत बन, ऐसा भय लगता है। शायद ऐसा हो कि दूसरे अधिक अच्छी परीक्षा कर सकें। विषप्रकरण यहीं समाप्त करता हूँ।

आश्रम छोड़ने का तेरा प्रश्न आज अप्रस्तुत है। मैं छूटकर आश्रम में रहने लगूँगा तभी यह प्रश्न उठ सकता है ऐसा तेरे पत्र से मैं समझता हूँ। नैतिक दृष्टि से तो यह प्रश्न तभी निकला तो तुरन्त उठेगा। मैं आश्रम में न रह सकूँगा, तब तक आश्रम की दृष्टि से मैं जेल में होने की तरह ही गिना जाऊँगा। और जब मैंने आश्रम से बिदाई ली उसी समय तुम लोग जो पीछे रह गये थे मैं वापस आ सकूँगा तब तक वचन में ही रहे। मेरा यह मत यथार्थ हो तो यहाँ रहने के लिए मेरे आने के पश्चात् क्या करना उचित है इसका विचार करना। अभी उस पर विचार करना शक्ति और समय का अपव्यय है।

× × ×

अपने काम में मैं किसी को फँसाना नहीं चाहता। तब मेरी ही मूर्तियाँ बनी तो मेरी क्या दशा होगी। ऐसा प्रयत्न भी व्यर्थ समझता हूँ। किन्तु कदाचित् मैं किसी को ठगने का प्रयत्न भी करता हूँ तो भी तू आत्म-विश्वास क्यों खोती है? तेरे पत्रों से प्रमाणित है कि तू सावधान है। हाँ इतना तो सच है कि हम ठग जायेंगी ऐसा डर मुझे हमेशा मालूम होता रहता है।

यह बुरा लक्षण है। निश्चय करने पर डर काहे का? अथवा 'ठगाना' इस शब्द का अर्थ हम दोनों एक ही न करते होंगे ऐसा भी हो सकता है।

ता २१—१—३२ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मन्दिर

[पत्र—५५]

आश्रम : आश्रम और मैं : आश्रम धर्मशाला है : मेरी मौसी

बड़ी बस्ती : स्त्रियों का ब्रह्मचर्य

चि — यह मौनवार का सवेरा है! तीन बजे उठकर तेरा पत्र हाथ में लिया है। यह पत्र मुझे बहुत पसंद आया। मुझे चाहिए वह सब तूने दिया है। स्त्रियों की ओर से जो मिलने की मैंने कल्पना की है वह उसमें है—बिना आडम्बर किये छोटे-मोटे किन्तु वैज्ञानिक और अत्यन्त उपयोगी। ऐसे सच्चे पत्रों से मुझे ज्ञान प्राप्त होता है और मुझे तथा औरों को मैं रास्ता दिखा सकता हूँ।

आश्रम सचमुच 'धर्मशाला' है। 'धर्मशाला' के दो अर्थ हैं दान कर दिया हुआ निवासस्थान और धर्म जानने का और जानकर उसका पालन करने के प्रयत्न का स्थान। इसमें के दूसरे अर्थ में यह धर्मशाला है। किन्तु सत्य ही धर्म है अतः सत्य की खोज कर उसके अनुसार चलने का प्रयत्न करने की अर्थात् सत्य का आग्रह रखने की शाला मानें सत्याग्रह आश्रम।

सत्य खोजते समय जीवमात्र के साथ ऐक्य साधना पड़ता है। अतः आश्रम एक विशाल बनता जाने वाला परिवार है। ऐसा होकर भी वह उससे अधिक है। क्योंकि वह धर्म के साथ है। उस पर धर्म अवलम्बित नहीं। और वह शिक्षालय है और होकर भी नहीं है। क्योंकि वह परिवार है। इस कारण सामान्य शिक्षा के बाह्य नियम उस पर 'जड़ भरत' की तरह लागू नहीं किये जा सकते। नियम की आत्मा समझने के लिए नियम के शरीर—बाह्य रूप—को त्यागना पड़ेगा।

एक उदाहरण लेकर उस पर यह बात कैसे किस प्रकार लागू होती है यह हम देखें। लक्ष्मी को बढ़ाने में हमारी—तेरी परीक्षा है। परिवार के बच्चों को हम क्या करेंगे? तेरी इतनी बहिन को तू क्या करेगी।
लक्ष्मी ने नियम न पाले यह सही नहीं इसमें दोष मेरा बाद में तेरा। बीच के लोगों को मैं दोष देता हूँ। यह काम जो का ही है। और विशेषकर जिसके हाथ सौंपा गया होगा उसका। मेरा अपराध प्रथम क्योंकि माना हुआ पिता मैं और माता भी मैं ही। मैंने पितृधर्म का पालन किया किन्तु मातृधर्म का पालन नहीं किया। क्योंकि मैं दूसरा ही रहा। अतः मुझे लक्ष्मी को शायद रखना ही नहीं था। किन्तु मैं कौन? ईश्वर का हाथ। लक्ष्मी को मैं खोजने नहीं गया था। उसे ईश्वर ने भेजा। वह उसे सम्हालेगा.......।

'बा' बाद में लक्ष्मी फिर गंगाबेन और अब तू। तुममें से किसी ने उसे बुलाया नहीं था। काल के अनुसार और परिस्थिति के अनुसार वह उस-उस आदमियों के हाथ गई। अब तेरे हाथ से जो बने वह करो। पूछना हो तब मुझे पूछ। थक नहीं; निराश न हो। मजा रख और उस पर प्रेम की वर्षा कर। अन्त में ईश्वर मुक्ति देगा। वह हरिजनों की प्रतिनिधि होकर अपने पास ... देने के लिए आई है। वह थोड़ी भागती है तो उसका पाप मुझ पर मुझ पर सभी सवर्ण हिन्दुओं पर है। बोझा मैंने उठाया।
दूसरी लड़कियाँ लड़के आ रहे हैं इससे घबराने की आवश्यकता नहीं। वे जितना नियम पालन करें उतना ही लाभ होगा। लगन हो तब तक उन्हें रहने दिया जाय न हो तब उन्हें छुट्टी दे दी जाय। धर्मशाला में मुसाफिर कुछ स्थिर नहीं रहते। परिवार के लोग भी स्थिर नहीं रहते। आश्रम की चौखट में जो रह सकेंगे वे ही रहेंगे। जो न रहेंगे वे जायेंगे। उसमें सुख-दुःख काहे का? और आज तो इससे दूसरा कुछ और हो ही न सकेगा। शक्ति है तब तक जो आवें और जिन पर थोड़ी देर भी नजर रह सके उन्हें रख लिया जाय। बहुत से अपने आप भाग जायेंगे। अपने नियम ही बहुतों को भगा देंगे। जो भागना उसे मजबूरी करनी ही पड़ेगी।

पाखाना साफ करना ही पड़ेगा। उस को औषध मान कर खाना ही पड़ेगा। गुड़ नहीं मिलेगा और गेहूँ भी जब चाहिए तब न मिलेगा। आश्रम गरीब कंगाल, भूख से मरने वाले लोगों का प्रतिनिधि है ऐसा दीन सिद्ध करते जायेंगे तो निरन्तर सुरक्षित और सुखी रह सकेंगे। अतः आश्रम में प्रतिदिन सादगी बढ़नी चाहिए। प्रतिदिन नियम-पालन कड़ाई से होना चाहिए। अग्नि अपने स्वरूप में रही तो उसके साथ में न टिक सकने वाले जीव उसके पास रह ही न सकेंगे। वह अग्नि का दोष नहीं बल्कि गुण है। वैसे ही हम अपने स्वरूप में नहीं रहते। इसीलिए सभी उपाधियाँ उत्पन्न होती हैं। सादगी इत्यादि की कड़ाई के बारे में मैंने जो लिखा वह अपने तक सीमित है। हममें उसका अंश रोज बढ़ाना चाहिए। अपनी रक्षा का मार्ग हमने अपने अंदर से खोज निकाला है वह बाहर नहीं है—हम माने आश्रम में समझ के साथ रहने वाले—मैं तुम और प्रत्येक व्यक्ति। सब आश्रमवासी पालन करें उतने ही नियम मुझे पालन करना चाहिए, ऐसा नहीं। मेरे हाथ से अधिक से अधिक उसका पालन हो सके वह करना ही चाहिए। इसी में आश्रम की उत्पत्ति की कुंजी है। औरों के विषय में उदारता और खुद के बारे में कृपणता ऐसा करते हुए भी हम किसी तरह अपने बारे में विवेक के साथ रहने लगेंगे। क्योंकि बहुत बार औरों के बारे में सच्ची उदारता नहीं होती और अपने विषय की कृपणता के बारे में भी केवल आभास की संभावना बहुधा होती है।

लड़कियों के विषय में आदर्श अखंड ब्रह्मचर्य का है। उसी में आदर्श विवाह समाविष्ट है। विवाह की शिक्षा देने की आवश्यकता नहीं होती। वह संबंध देहधारियों के स्वभाव में ही है। इस स्वभाव को किसी नियम में रखने के लिए विवाह-विधि बनाई गई। इस स्वभाव पर पूरा अंकुश अर्थात् ब्रह्मचर्य। जो पूरा अंकुश पालन करेगा वह विवाह रूपी सामित अंकुश का पालन करेगा ही। किन्तु जिसका पहले से ही विवाह ही आदर्श है उसे विवाह का रहस्य भी समझ में नहीं आता। विकारों के लिए शिक्षा की क्या आवश्यकता? वे अपने आप ही बाहर निकलते रहते हैं।

किन्तु जो ब्रह्मचारिणी है उसे सब की व्यवस्था करने का ज्ञान प्राप्त करना ही होगा। शिशुपालन का ज्ञान लेना ही पड़ेगा। एकाकी, गुफा में जाकर बैठी हुई है उसे कुमारिका नहीं कहा जा सकता। कुमारिका समस्त संसार से विवाह करती है सारे संसार की माता बनती है। पुत्री बनती है। सारे संसार का कारबार चलाने लायक बनती है। ऐसी कोई कुमारिका शायद आज तक उत्पन्न नहीं हुई होगी। किन्तु आदर्श यही है। अतः सभी की शिक्षा एक ही होगी। अब मैं समझता हूँ कि मैंने पर्याप्त स्पष्ट कर दिया है।

उस मुसलमान बहिन के विषय में क्या कर्तव्य है वह इसी में से स्पष्ट होना चाहिए। लड़कियों के 'फिट' वगैरा का कारण अपनी अपूर्णता है। हम बाबा ही क्यों न हों आवश्यक उतना आगे बढ़े तो लड़कों का अस्तित्व भयानक मालूम न होगा। किन्तु जहाँ बोझा मालूम हो वहाँ लड़कों को हटा देना चाहिए। मेरा संपूर्ण विश्वास पर है। मेरी कल्पना में वे भी यदि आश्रम के मंत्री हों तो सब कुशल है। उनके विषय में मेरी श्रद्धा बढ़ती जा रही है। वे हटे तो दूसरे पुराने आश्रमी हैं। वे आगे आयेंगे। कुल मिलाकर सब कुछ ठीक होगा। आश्रम में आदमी बहुत हैं किन्तु आश्रमी कम हैं इसलिए भार मालूम होता है। ऐसी बहुत-सी अपूर्व परिस्थिति में तुम सब हो सके उतना करके मुक्त हो जाओ। आश्रम मुझे नचाने का यंत्र है। मैं चाहे जहाँ होऊँ आश्रम को लेकर घूमता हूँ। देह कहीं भी हो आत्मा वहीं निवास करती है। उसमें होने वाले सब पाप मुझमें या अपना भाग कम से वास करते ही होंगे। तुम सबको पहिचानने में मेरी गलती हुई हो तो दोष मेरा नहीं तो किसका! किन्तु यदि मैं अपने को ही पहचानता न होऊँ तो तुम सबका न्यायकर्ता कैसे बनूँ! नाम गिनने बैठता हूँ तो दिखाई देता है कि छगनलाल और मगनलाल के सिवा औरों को मैं ढूँढने नहीं गया था, सबं ईश्वर ने मेरी परीक्षा करने के लिए अथवा मेरी मदद करने के लिए भेजा है।

मा ११—२—३३ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—५६]

आश्रम और डाक्टर

चि०—, अब आज लम्बा पत्र नहीं लिखता ········। एक अंग्रेज बहन को भेजा है। उनसे ठीक परिचय कर लो। मुझे वे त्यागी दिखाई देते हैं। उन्हें क्या चाहिए, क्या नहीं इसकी चिन्ता करो।········। डाक्टरों के बारे में समझ गया। एक बार उनके हाथ में जाने पर जो प्राप्त करना हो प्राप्त कर लेना चाहिए। वैसा न किया तो उनके प्रति न्याय न होगा और अपना नुकसान होने की सम्भावना रहेगी। कुछ काम उनसे अच्छे बनते हैं यह मंजूर करना चाहिए। बाकी ध्यान न रहने के कारण अज्ञान में वे अनेक गलतियाँ करते हैं यह तो संसार प्रसिद्ध है। उनकी मदद नहीं ही लेना ऐसी किसी ने प्रतिज्ञा की तो मैं उसका अवश्य आदर करूँगा। करोड़ों लोगों को तो उनकी मदद मिलती ही नहीं। किन्तु यह त्याग आश्रम की शक्ति के बाहर है ऐसा मेरा मत है। इसीलिए अच्छे डाक्टरों की मदद हम लेते हैं।

ता १९—२—३२ बापू के आशीर्वाद

यरवडा मन्दिर

[पत्र—५७]

आश्रम और मैं

चि०— तूने अपनी बनाई हुई जो पूनियाँ भेजी उनसे मैं ७५ नम्बर के आगे बढ़ न सका। ७५ नम्बर का सूत बहुत कच्चा कहा जाता है। तूने जो तौल दी है उसी से नम्बर निकाला है। यहाँ की तराजू पर बारीक तौल नहीं निकलती। मेरा हाथ यदि ठीक चलेगा तो १ नम्बर तक जा सकूँगा, ऐसा मुझे मालूम होता है।

कच्चे शाक और नमक से तो काम चलना ही चाहिए। उनके बराबर रोज ढाई तोला ताजा कच्चा दूध लेना चाहिए। कच्चे शाक में टमाटर, मूली

गाजर या लेटिस ऐसी चीजें चाहिएँ। नमक न लिया जाय। दो-तीन नींबू पानी के साथ या शक्कर के साथ खाने चाहिएँ। अलग निचोड़कर पानी के साथ पीना शायद अधिक अच्छा होगा। उससे दाँत खट्टे हों और न खाये जाय तब नींबू के रस में सोडा डालकर लेना चाहिए।

आश्रम की त्रुटियाँ जितनी तू बतायेगी, स्वीकार करूँगा। किन्तु उसके साथ ही यदि तू उपाय सोचकर लिखेगी तो अधिक उपयोगी होगा। सोचते न बने तो भी तेरी आलोचना मुझे चाहिए ही। मेरी अक्ल जितनी चलती है उतनी मैं चलाता हूँ। मुझे इतना मालूम है कि आश्रम की त्रुटियाँ आश्रम की नहीं, मेरी हैं। कुम्हार ने मटका बेडौल बनाया तो दोष मटके का या कुम्हार का? यह उपमा मैं सौ प्रतिशत सच मानता हूँ और उसके कारण मुझे मेरी मूर्खता की माप मालूम होती है। किन्तु त्रुटियाँ हों तो भी आश्रम मुझे अच्छा लगता है। क्योंकि मैं खुद अपने को अच्छा नहीं लगता यह कहने के लिए तैयार नहीं हूँ। जितने अंशों में 'मैं' (अहंभाव) नहीं हूँ उतने अंशों में मैं अपने को अच्छा लगता हूँ। और जितने अंशों में है उसे नष्ट करने का सतत प्रयत्न कर रहा हूँ।

ता ५—१—३१

यरवडा मन्दिर

बापू के आशीर्वाद

[पत्र—९८]

स्त्रियों का समर्पण

चि० — तेरा सुन्दर पत्र मिला। पर भावना तुममें स्थिर हो। जो मैंने तेरे लिए सूत रखने को कह दिया है। वह रखूँगा। वह माँग तिरस्कृत करने की कोई आवश्यकता नहीं। मेरे पास आकर जो माँगने का तुमको अधिकार है। सूत की माँग शुद्ध है। जिस पद्धति से माँग की गई उसमें दोष था वह तूने सुधार लिया तो अब कुछ कहने की आवश्यकता नहीं रही।

तू देखती ही है कि मेरी आशाएं मिट्टी हो चली हैं। क्या और क्या! उनके बारे में मुझे कोई भी सन्देह न होता। उनपर मैंने आशाओं का पहाड़ बनाया था। किन्तु उसकी नींव बालू की थी। आश्रम का आदर्श कैसे सिद्ध होगा। कोई किसी की आलोचना न करते हुए स्वतन्त्र प्रयत्न करेगा तो वह सिद्ध हो जायगा। क्या तू ऐसा प्रयत्न करेगी! मेरी ब्रह्मचर्य की व्याख्या तुझे मालूम है न उसे पूरी करेगी! उसमें राग-द्वेष को स्थान ही नहीं। तुझे तेरी आराधना नहीं करनी है। तुझे उपदेश भी करना नहीं है। मैं केवल अपनी भिक्षा माँग रहा हूँ। जब तक यह भिक्षापात्र भरेगा नहीं तब तक आश्रम ऐसा आश्रम न हो सकेगा। ...

"—यहाँ आश्रम में बहुत सी महाराष्ट्र बहिनें हैं। जमनालाल जी ने उन्हें यहाँ भेजा है, ऐसा वे कहते थे। उनमें से एकाध को तुम्हें उनके महिलाश्रम के लिए तैयार करना चाहिए, ऐसा जमनालाल जी का तुमको सन्देश है। तेरी कमर है क्या! ठीक होनी चाहिए। मुझे लिखो।

श्वेत पत्र (White Paper) के बारे में मैं कुछ कह नहीं सकता। यहाँ हूँ, तब तक यह मेरा क्षेत्र ही नहीं अतः मैंने वह पढ़ा भी नहीं है।

ता० २१—३—३३ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—५६]

मङला

चि०——— के बारे में तूने लिखा वह अर्द्ध-सत्य है। गलतियाँ सबसे होती हैं। उसका दुःख न मानना चाहिए। किन्तु गलती करने वाले ने गलती छिपाकर रखी और वह अनिच्छया प्रकट हो ही गई तो फिर अपनी अनुचित सफाई देने लगना ऐसा हुआ तो दुःख मालूम ही होना चाहिए। यदि दुःख मालूम न हुआ तो ऐसी घटनाओं को बन्द करने का उपाय ही न मालूम होगा। ऐसी बातें होगी ही। तो उन्हें रोकने का प्रयत्न ही निरर्थक करना, ऐसा विचार किया तो समाज का नाश ही होगा। अतः ऐसी बातें रोकने के लिए उपाय-योजना करनी ही

चाहिए। ऐसे उपाय करने से मोह लगे तो भी करने चाहिएं। जो मित्र दुःख करता है, क्रोध करता है, वह ठीक नहीं ऐसा कहा जा सकता है और तुझे भी मैं समझता हूँ, इतना ही कहना है। इससे अधिक कुछ तुझे कहना हो तो वह गलती है। इसमें मुझे सन्देह नहीं है। दुःख आभाव इत्यादि शब्दों के बजाय दूसरे शब्द मिलें तो मैं अवश्य उन्हें मान लूँगा। किन्तु तेरे पत्र में कहीं तो मोह छिपा हुआ है। 'मोह' शब्द ठीक उपयोग में लाया गया है या नहीं, यह मैं नहीं बता सकता। मेरा आशय तेरी समझ में आ जाय बस......

तुझसे मुझे चाहिए सरलता मृदुता नम्रता, धीरता सहनशीलता, उदारता। तू आसमान से उतरेगी तभी मुझे यह मिलेगा। 'हम कुछ नहीं हैं' ऐसा तू कब मानने लगेगी? रोज पृथ्वी माता की वन्दना करना और रोज उसे लात मारना यह क्या है? यदि सचमुच अपनी इस प्रार्थना में सत्य हो तो हमें रज-कण बनना चाहिए और संसार की लात सहन करना सीखना चाहिए जिससे पृथ्वी माता को अपने चरणों का स्पर्श न हो। क्योंकि तब जीवित रहते हुए भी हम धूल हो जाते हैं। रुई की धूल उड़ाता था।

परचुरे शास्त्री के लड़के की जिम्मेदारी ली, ठीक किया।......

तेरी पूनियाँ अब भी चल रही हैं। उनमें गाँठें रह गई हैं। यह दोष तेरा नहीं कुछ यंत्रों में धुनाई का है और कुछ रुई का है। अधिक धुनी होती तो रुई के तन्तु कमजोर हो जाते। दूसरी पूनियाँ बहुत अच्छा सूत नहीं देतीं किन्तु उनमें गाँठें बहुत कम हैं।

ता० ९—४—३२ बापू के आशीर्वाद
यरवडा मन्दिर

---

* समुद्रवसने देवी पर्वतस्तनमण्डले
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे।
[प्रातःप्रार्थना आश्रम-भजनावली]

[पत्र—६०]

ब्रह्मचर्य का अभिमान : ब्रह्मचारी का आश्रय ईश्वर है

चि०—, तेरा पत्र मिला। लिखा तो। लिखा अच्छा है। भाव विस्तार से लिखने लायक नहीं है। तेरा पत्र अच्छा है फिर भी उसमें ब्रह्मचारिणी को न शोभित होने वाला अभिमान है। नारद की कथा स्मरण रखो। नारद ने ज्योंही ब्रह्मचर्य का अभिमान किया कि गिरे। ब्रह्मचारी का आधार तो ईश्वर होता है अतः उसे नम्र होना चाहिए। खुद का विश्वास न करो। जो जन्मतः निर्विकार है वह मनुष्य नहीं। वह या तो ईश्वर है या पुरुष या स्त्री-शक्ति-रहित है—अर्थात् अपूर्ण है रोगी है। परमेश्वर को अभिमान किस बात का? पत्थर को क्या पत्थरपन का अभिमान होता है? रोगी को रोग का अभिमान न होना चाहिए। स्त्री-पुरुष अपने विकार संयमित रखने की शक्ति प्राप्त कर सकते हैं और संग्रहीत हुई शक्ति का वे सदुपयोग कर सकते हैं। किन्तु जिसे इस शक्ति का अभिमान उत्पन्न हुआ उसकी शक्ति का उसी वक्त नाश हो जाता है। तुझमें जो ब्रह्मचर्य है उसका कितना क्षय हो रहा है तुझे क्या मालूम? तेरे ब्रह्मचर्य में न्यूनता तो अवश्य है ही। तुझमें स्वाभाविक क्या है। तुझे विकार मालूम ही न हो तो तू क्या देवी है? देवी के लक्षण अलग ही होते हैं। तू देवी नहीं है। तुझे रोग है ऐसा भी मुझे नहीं मालूम होता है। तू खुद की जाँच कर और मुझे लिख।

ता २—४—११ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—६१]

[illegible] : शरीर-रक्षा : क्रोध भी व्याधि है

चि०— तेरा पत्र मिला। मैंने तुझे जोरों की सूचना दी, इतना बस है। तू समझती है कि मैं तेरे पत्र ठीक पढ़ता नहीं। किन्तु यह गलत है। तेरे लिखने का आशय मैंने ठीक समझा था। तेरे इतने

आत्म-विश्वास में हो अभिमान, या चाहे उसे गर्व कहो, भरा हुआ है। तेरा अभिमान तेरी भाषा में ही दिखाई देता है। किन्तु उससे मैं कुछ ऐसी इच्छा नहीं करता कि तू अपने विचारों को छिपाले और मर्जी-भाँति सजाकर मेरे सामने रखे। जैसे (विचार) आते हैं वैसे तू मुझे भेजती है, वह मुझे पसन्द है। तू भीतर बाहर जैसी है वैसी मुझे देखने देती है वह मैं तेरा गुण समझता हूँ। तू कृत्रिम बनी तो मैं लाचार हो जाऊँगा और तुझे कुछ भी बता न सकूँगा।

तकलीफ की मुझे आदत हो गई है। ईश्वर मेरी परीक्षा अनेक तरह से ले रहा है। आहत हुए बिना मनुष्य बनेगा कैसे। तू कर्तव्य-पालन नहीं कर रही है ऐसा मुझे अवश्य मालूम होता है। मद्रास से ही गले को विश्राम देने के लिए लिखा था। शरीर को भी विश्राम देने के लिए लिखा था। पर तू दोनों आज्ञाओं का अनादर कर रही है। ये आज्ञाएँ तुझे देने में मेरा स्वार्थ नहीं आश्रम का है। तेरा गला हमेशा के लिए बिगड़ गया शरीर खराब हो गया तो तेरा नुकसान जो होगा उससे आश्रम का अधिक होगा। यह सीधा-सादा सत्य तेरी समझ में आता है? यदि समझती है तो विनम्र होकर शरीर स्वस्थ रखने के लिए जो बताया जाय वह करते जाना। यही बात क्रोध के बारे में। वह भी एक व्याधि है। उसे भी दूर कर। अधीरता भी दूर कर।

ता १—४—२१ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—६२]

मार्मिक वर्म

चि — रज-कण होने का पाठ मैं नहीं दे सकता। ईश्वर को जानने पर मनुष्य अपने आप रज-कण ही जाता है। वह पाठ अपने रास्ते जब आना होगा तभी आवेगा।

"तू समझती है कि मेरे आसपास तेरे विरुद्ध वातावरण एकत्र हुआ है। किन्तु यह गलत है" मैं तेरे बारे में जो बताया वह सब

नहीं। वे तेरा मुख्य जानते हैं किन्तु कहते हैं तू अपनी जीभ को लगाम नहीं लगायेगी तब तक तुझपर जिम्मेवारी न छोड़नी चाहिए। यह उनका पुराना कथन है। मैं अपने*तीनों साथियों के साथ शायद ही कभी बातें करता हूँ, यह तू ध्यान में रख। खाते समय या घूमते समय कुछ हँसी-मजाक के सिवा दूसरा कुछ हो ही नहीं सकता। विशेष प्रसंग को छोड़ कर हम शायद ही किसी व्यक्ति के बारे में चर्चा करते हैं। व्यय की चर्चा कर में अपनी शक्ति का व्यय भी नहीं करना चाहता।...तेरे विरुद्ध वातावरण मेरे आसपास भी नहीं और मेरे मन में भी नहीं। मैं तुझे कड़ी फटकार देता हूँ वह मैं तुझे अपनी लड़की मानता हूँ और तू पूर्ण हो या ऐसी मेरी इच्छा है इसलिए। मेरी आलोचना से तू दुखी क्यों होती है? उसमें जो लेने लायक हो वह लेकर बाकी भूल जाना। क्योंकि मेरी आलोचना में कदाचित् अज्ञान होगा। तेरी भाषा कदाचित् मेरी समझ में न आई होगी। ऐसा होने की भी बड़ी सम्भावना है।

एक ही वस्तु विभिन्न मनुष्य अलग अलग ढङ्ग से देखते हैं यह ठीक है। एक ही शक्ति का उपयोग अलग-अलग ढङ्ग से होता है यह हम प्रति-दिन देखते रहते हैं।

(स्त्रियों के) मासिक धर्म के समय किसी को भी नियत कार्य नहीं सौंपना चाहिए, ऐसा मुझे जान पड़ता है। उनका दुख कब उत्पन्न होगा यह दूसरे किसी की समझ में न आवेगा। उस समय स्त्री पर किसी प्रकार का बाहरी बोझ न होना चाहिए, यह डर है। उसका मन जिस काम में लगे उसे वे सुख से करें। कितनी ही स्त्रियों को मासिक धर्म का परिणाम मालूम ही नहीं होता और वे अपना काम चालू रखती हैं। बहुतों को असह्य वेदना होती है। कितनी को वेदना नहीं होती किन्तु शरीर काम करने लायक नहीं रहता। जिसे इस धर्म का सदुपयोग करते बनता है वह हर महीने नई शक्ति प्राप्त करती है। ये तीन

---

*सरदार वल्लभभाई, महादेव भाई और जमनालाल जोशी

या चार दिन नई शक्ति प्राप्त करने के होते हैं। और उसे प्राप्त करने के लिए स्त्री को प्रत्येक जिम्मेदारी से मुक्त रखना इष्ट है। उसे सीने की इच्छा हुई तो उसे वैसा करने की छूट चाहिये। नासमझी के कारण बहुत सी स्त्रियाँ उस समय भी दौड़-धूप नहीं छोड़तीं। वे ज्ञानहीन हैं। उन्हें समझा देने की आवश्यकता है......।

ता०—१२—४—११ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—६३]

शिष्य शिक्षक

चि — तूने उस लड़की को भला क्यों मारा? शिक्षिका के शिष्य से यदि क्षमा माँगी तो उसका स्वाभिमान कुछ कम नहीं होता बल्कि बढ़ता है। शिष्य भी उसे अधिक चाहने लगते हैं। अतः तूने यदि क्षमा न माँगी हो और तूने जो मारा वह यदि तुझे दोष मालूम होता हो तो तू उस लड़की से क्षमा माँग। उसमें तेरा कल्याण ही है......।

काम करने में अधीरता किस बात की? जितना धीरे-धीरे करती जाओगी उतने में तद्रूप रहने से काम की गति और सफाई बढ़ती है। मेरा हजारों बार का अनुभव है।

ता —१७—४—११ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—६४]

सुधारक । सीता वासिनी

चि — दाहिना हाथ बहुत थक गया अतः जो शक्ति बची हो वह 'हरिजन' के लेख के लिए बचा रखने की इच्छा है। मैं समझता हूँ कि पृथक् टिप्पणी देने की आवश्यकता न होगी।

थोड़ा तंग करेगी। उसे यदि सुधारना हो तो केवल यत्न करने और प्रेम से ही सुधर सकेगी। उसे माँ न होने का अनुभव न होने

ही। अपना। धीरज न छूटने दो। सुधारक का—सेवक का—धीरज के बिना पल-भर भी नहीं चल सकता यह याद रखो। अपनी दीवार पर लिख रखो। उसका मंत्र बनाकर गले में पहनो।

यहाँ से आशा मिली कि नीला नागिनी यहाँ थोड़े ही दिनों में आवेगी। उसने कुछ-न-कुछ व्यभिचार किया है। कम लिखा है मूठ बोली है। अब वह साध्वी बन बैठी है। मुझे उसमें कृत्रिमता नहीं मालूम हुई। उसे अपने दोषों का दर्शन होने पर जितना मैंने उसे बताया उतना उसने किया है। यदि उसे उसके शुभ निश्चयों के अनुसार यहीं रह सकने का अवसर हो तो वह आश्रम में ही खिलेगी और दूसरी किसी भी जगह वह सूख जायगी या फिर स्वेच्छाचारी बन जायगी। उसकी शक्ति बहुत है; उसे जानकारी बहुत है। महाभारत से उसका अच्छा परिचय है। वह आवे तो उससे परिचय कर लो, और बहिनों से उसका परिचय करा दो। उसके भूतकाल की बातें उससे निकालने में मत लगाओ। वह उन्हें निकालेगी। किन्तु उसकी बातें निकलवाने में दोष है। विषय का स्मरण हानिकारक है। अपने बारे में भूतकाल की बातें वह प्रेम से बताने लगे तो समझना चाहिए कि उसमें से उसका उच्चाटन हुआ नहीं है। उसे अपनी छोटी बहिन समझ कर प्रेम के साथ पोसती जा। उसके जीवन के बारे में जो कुछ पूछना हो वह मुझसे पूछ। उसे आश्रम में भेजने का समय आयगा तब विस्तृत लिखने के लिए मुझे समय न मिलेगा इसलिए आज ही इतना लिखा है। उसका लड़का बहुत भला है।

ता०—२१—४—३३ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—६५]

गतेन्द्रगति : प्रभु : शरणागति

चि — तुझे बीच में एक पत्र लिखा ही है। वायुमंडल बहुत अस्थिर हो चला है। उसमें ढेर विचार बराबर आते रहते हैं। मुझे

सीखने देने की इच्छा नहीं होती और तेरे काम सहन करने की शक्ति नहीं रही। मेरी स्थिति गजेन्द्र की तरह है। थोड़ी सी सूँड बाकी रही है। वह पानी में डूबी कि श्वास बन्द हो जायगा। अतः जिनके बारे में आज मन में विचार आते हैं उनके लिए प्रार्थना ही करना बाकी है। किन्तु प्रार्थना किससे करूँ? जो निरन्तर जाग्रत है जिसे जरा भी आलस्य नहीं, जो नाखून से भी अधिक निकट है जो सब कुछ सुनता है जिसे सब कुछ दिखाई देता है वह तो मेरी प्रार्थना जानता ही है।

अतः उसी के बल पर थोड़ी सी सूँड पानी के बाहर रही है। उसे जैसा करना हो वैसा करेगा। रखना होगा वैसे रखेगा।

ता —१६—४—३३ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—६६]

प्रार्थना जरूरी कार्य। आवश्यकार्य। श्रद्धा और सत्यशोधकता

चि — मेरा उपवास सभी आश्रम-वासियों के लिए होगा। अर्थात् तेरे लिए भी होगा। यह समझ कर तुझे जो रोग हों उन सबको निकाल डाल।

तेरे प्रश्न मेरे पास हैं ऐसा समझकर केवल उनके उत्तर ही संक्षेप में दे रहा हूँ। आज मुझे समय की बहुत तंगी है।

(१) छोटे बड़े कोई भी हों उन्हें नम्रता से समझाते न बना हो मौन धारण कर हृदय से उनके लिए प्रार्थना करना। ऐसा करने से [illegible] समाप्त हो जायगा।

( ) [illegible] नम्रता की परिभाषा समझ लेनी चाहिए। मैं श्लोक [illegible] हूँ और मुझे भाई दिखाई दिया उसे पकड़ना जरूरी है तो मुझे श्लोक बनाने के नियम का भंग करना चाहिए। उसी समय यदि [illegible] उपस्थित हुई तो भी उसका भंग करना चाहिए। मुझे ध्यान लगा तो उसे अवश्य [illegible] श्लोक बनाने चाहिएँ। यदि पहले से कुछ हुआ हो और श्लोक चालू रखें तो वैसा करने में पागलपन से भी अधिक गम्भीर बात होगी।

(३) धर्म के बीच में जो लोकाचार अड़चन डाले उसे तोड़ डालना चाहिए।

(४) यदि तुझे मेरे विषय में अनन्य श्रद्धा हो तो तुझे समझना चाहिए कि तू जिसे अन्तःप्रेरणा समझती है वह गलत होने की सम्भावना है। किन्तु अन्तःप्रेरणा श्रद्धा के भी आगे जाती हो तो चाहे जो संकट आवे मानना चाहिए।

(५) इसका उत्तर एकांगी नहीं होता।

(६) यह प्रश्न मेरी समझ में नहीं आया।

(७) हमें कोई झूठा और आलसी है ऐसा बारम्बार दिखाई दिया तो उसके वैसे होने का सन्देह सत्यार्थी मनुष्य के मन में भी आ सकेगा। किन्तु सत्यार्थी मनुष्य सन्देह होने पर भी आलस्य अथवा झुठाई करने वाले पर प्रेम रखता है और उसे अवसर देता रहता है।

(८) इस सम्बन्ध में सभी के लिए एक ही नियम नहीं रह सकता। प्रत्येक के मन पर यह अवलम्बित है। किन्तु कला का बहाना कर सादगी का त्याग नहीं करना चाहिए।

(९) उसका 'बनाव-सिंगार' करना ही निन्द्य है। 'तू भी वैसा ही ऐसा कहना क्षोभजन है।

(१०) अहिंसा के गर्भ में ही यह वस्तु है।

तेरे पास तेरे प्रश्नों की नकल कर रखने के लिए समय न होगा ऐसा समझकर उन्हें इस पत्र के साथ ही भेज रहा हूँ।

दो बहिनों को भेज तो रहा हूँ। बहुत संकोच मालूम होता है किन्तु भेजने का धर्म है ऐसा समझकर भेज रहा हूँ। आशा है कि वे तेरा काम न बढ़ावेंगी बल्कि तेरे काम आवेंगी। उनकी हिन्दी सीखने की व्यवस्था कर दे।

सुशीला इस बार भी अपनी छुट्टी आश्रम में बितावे ऐसी मेरी इच्छा है। तुम दोनों को उससे विश्राम मिलने की सम्भावना है। उद्योग का परिवर्तन ही विश्राम है यह अंग्रेजी कहावत तुझे मालूम है न? इसमें बहुत सत्य है।

लिखते लिखते स्वयं स्पष्ट हुआ यह विचार है, ऐसा समझना। सुशीला ने कोई अलग कार्यक्रम तय किया हो तो वह मेरी इच्छा के लिए रद करना चाहिए, ऐसा बिल्कुल नहीं।

ता १—५—११ बापू के आशीर्वाद

पूरिका:

उपर्युक्त पत्र में जिन प्रश्नों की चर्चा है वे ये हैं :—

(१) अपने से बड़ा अपने बराबर अथवा अपने से छोटा कोई भी व्यक्ति बहुत शोर मचाता हो उद्धत जवाब देता हो, अपशब्द बोलता हो, समझाने पर भी न समझता हो और इन बातों का परिणाम औरों पर बुरा होता हो, काम और समय खराब होता हो तो मनुष्य को क्या करना चाहिए। अपनी Impatience (अधीरता) कैसे जीती जाय।

(२) अपना कर्तव्य करते हुए किसी आवश्यकता से आश्रम के नियम का अथवा अनुशासन का भंग हो गया तो उसका औरों पर क्या परिणाम होगा। बुरा परिणाम होने लायक हो तो अपनी जरूरी बातों का त्याग करना चाहिए या नहीं।

(३) सत्याग्रह के मार्ग में लोकाचार की कीमत कहाँ तक करनी चाहिए।

(४) आपके समान पुरुषश्रेष्ठ आदमियों में और मुझमें किसी विशेष बात में मतभेद हो और मेरा मत मुझे अन्दर से सच मालूम होता हो और उसके बारे में आपकी संस्था के आचार-धर्म की हानि होती हो तो सत्याग्रही के नाते मुझे क्या करना उचित है।

(५) संस्था के लिए व्यक्ति भिन्न या व्यक्ति के कारण संस्था भिन्न होनी चाहिए।

(६) दूसरों के बारे में अपने मन में बुरे विचार आते हैं तो उन्हें जानने की मर्यादा क्या।

(७) किसी का मूल्यांकन या स्वार्थीपन कई बातों से हमें मालूम हो

जाने के कारण उस व्यक्ति के बारे में फिर किसी चीज में हमें संशय आया तो यह सत्यग्राही के लिए अच्छा मालूम होगा या नहीं?

(८) सादगी से जीवन बिताया तो उसकी मर्यादा कहाँ तक हो सकती है। साड़ी पर बेल-बूटी डालना फैशनेबुल कुर्ती पहनना सिर में या गले में फूल पहनना नक्काशीदार चप्पल पहनना आदि-आदि बातों में स्वामिभक्ता समझना या आश्रम के तत्वों की हत्या हुई समझना?

(९) आश्रम में एक मनुष्य दूसरे की आलोचना करता हो और वही दोष वह खुद करता हो अथवा उसने किया हो तो जिसकी आलोचना की उस व्यक्ति ने आलोचक को बुरा भला कहा और उसके दोष दिखाये तो उसे निन्द्य अथवा हिंसा कहा जा सकता है?

(१) आश्रम में आने वाले सब लोग विभिन्न हेतु मन में लेकर आते हैं। तो प्रत्येक के यहाँ के जीवन को अपनी दृष्टि से अलग-अलग रीति से देखना चाहिए क्या?

[पत्र—६७]

प्रतिक्षण घटती आयु : समय का सदुपयोग

चि०— मेरे पत्र से मेरे पत्र की बीच में टक्कर हुई-थी;मुझे मालूम होती है। मैंने कल पत्र लिखा और तूने भी कल ही। हम सबके वर्ष एक के पीछे एक बढ़ते जा रहे हैं। हम छोटे होते जा रहे हैं यह कहना कदाचित् अधिक ठीक होगा। हैं न? जितने साल जाते हैं उतने आयु के कम हुए, उतने अंशों में हम छोटे हुए, ऐसा कहना चाहिए। इससे मुझे यह तात्पर्य निकालना है कि हमें अधिकाधिक सावधान होना चाहिए। हमें डोरी मानों ऐसी कम होती जा रही है। जो बाकी है उसका पूरा उपयोग करना सीखें। तेरे बारे में यही सिद्ध हो ऐसी मेरी इच्छा है।

ता १—७—३१ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—६८]

सत्याग्रह स्थगित

चि — "आज लिखता हूँ उसके दो कारण हैं। एक तो • • प्रेरणा करती है और दूसरा उसकी दी हुई खबर। मेरा निर्णय सुनकर तू तीन दिन रोई! मैं समझता था कि यह निर्णय सुनकर तुझ पर आघात होगा। किन्तु उसी के साथ तू नाचने लगेगी मानो लगेगी। क्योंकि उसका रहस्य, महत्व और शुद्ध सत्य समझे बिना नहीं रह सकेगी। अनुभव से उसकी योग्यता रोज-ब-रोज सिद्ध हो रही है। इसमें सहकारियों की योग्यता का प्रश्न नहीं। अयोग्य कोई भी नहीं निकला। किन्तु जो प्रकट हुआ वह सूचक था। उसने मुझे यह निर्णय करने की प्रेरणा दी। समय जाते ही—और समय आ गया हो—तो ही सहकारी बढ़ गे। प्रश्न अधिक शक्ति प्राप्त करने का अधिक संयम की अपेक्षा रखता था। मेरे हथियार आज काम नहीं आये, इस कारण वे कुछ अयोग्य नहीं हैं। उन्हें अधिक पानी देने की (तेज करने की) अपेक्षा रखता होगी उनका उपयोग असमय हुआ। इससे अधिक समझाया नहीं जा सकता। तू सूझने पर सीधे मुझे खोज निकाल और पेट भरकर मुझसे लड़ ले और समझ ले। निर्णय के पीछे सत्य की कसौटी है। किन्तु ईश्वर की कृपा से हम सब उसमें से पार हो जायेंगे।

यह पत्र पटना जाते समय गाड़ी में लिखा है। किन्तु है [illegible] इतनी सीधी चलती है कि उसमें लिखने में अड़चन नहीं होती।

ता. —१०—५—३४ बापू के आशीर्वाद

• सत्याग्रह का आन्दोलन स्थगित करने का निर्णय

[पत्र—६९]

थोड़ा किन्तु भलीभाँति किया कर्म

चि — तेरा पत्र मिला। आज भी तड़के की प्रार्थना के पूर्व यह पत्र लिख रहा हूँ। यह कुछ तुझ पर मेहरबानी कर नहीं लिखता। इतना ही दिखाने के लिए लिखा है कि अब नियम के अनुसार तड़के तीन बजे उठ कर काम में लग जाता हूँ। दिन भर पत्र लिखने के लिए मुझे बहुत कम फुर्सत मिलती है। मुझे कोई उठाता नहीं और एकाम भी नहीं है। यहाँ सोने के लिए छत है।

ऐसा दिखाई देता है कि तू व्यवसाय बढ़ा रही है। कम करना चाहिए किन्तु पक्का करना चाहिए, ऐसी मेरी सलाह है। देहातों के काम में जल्दबाजी अच्छी नहीं। 'हरिजन' अथवा 'हरिजनबन्धु' नियम से पढ़ती जाना। उसमें आजकल और विषयों की भी चर्चा रहती है…।

गीताई की कापी चाहिए तो भेजूँगा। मेरे निवेदन*—से कुछ विचार सूझे हों तो लिख……

ता २—९—३४ बापू के आशीर्वाद

वर्धा

[पत्र—७०]

नाम नहीं काम मार्मिक कार्य

चि — तेरा पत्र वर्णनों से भरा हुआ है। जान पड़ता है काम अच्छा चला है। इसी तरह हिसाब भेजती रहना।

देहात में काम करने के बारे में 'हरिजन' में लिखा है। वह देखो। सब जगह एक ही पद्धति से काम नहीं चल सकता। पर बिना थोड़ा

---

*महात्मा जी ने जेल से गीता का अनुवाद कर लिखा था उस समय का निवेदन।

हुआ खेत है। अतः काम में बहुत विविधता होने की सम्भावना है। मेरे पास जो योजना है और जो मैंने 'हरिजन' में दी है वह केवल एक ही तरह की है। किन्तु उसका घूँट किसे पिलाऊँ? तुम्हीं को न! तू अब कितनों को सिखाती है देखें। तेरी अड़चनों का मुझे यथार्थ मालूम नहीं होता। मेरी सलाह है कि तू कांग्रेस का भी नाम न ले। सविनय भंग की बात तो दूर रही आज तू जो-जो काम करती है उनके गुण-दोष ग्रामवासियों को बताना चाहिए। कांग्रेस के काम के सिवा नाम अनावश्यक है। जो 'कृष्ण' कहता है वह उसका पुजारी नहीं। रोटी रोटी कहने से पेट नहीं भरता खाने से ही भरता है।

मुझे मालूम हुआ यह ठीक है। मौन छोड़ने की यदि आज्ञा होगी तो उसका आनन्द से पालन् करता है। स्वयं अपने बनाये नियमों का भी जो इच्छा के साथ पालन करता है उसी को कभी-कभी नियम-भंग करने का अधिकार प्राप्त होता है। यह बात थोड़े लोगों के ही ध्यान में आती है।

मेरा कांग्रेस में आना होगा ही, ऐसा मानने की आवश्यकता नहीं। मन में बहुत-सी बातें चल रही हैं। उन सबको लिखने के लिए समय नहीं मिलता। जो हो, देखती रहो।

ऐसा कहा जा सकता है कि अब्दुल कलाम को लिखा गया तेरा (उर्दू) पत्र अच्छा है।

ता. १—९—१४
वर्धा, तड़के तीन बजे

बापू के आशीर्वाद

[पत्र—७१

आश्रम का बलिदान

चि — तेरा पत्र मिला। तेरी उदारता अपरंपार है। मैंने न लिखा तो भी काम चलाया करती है। किन्तु उदारता का उपयोग करने की आज तो मुझे इच्छा नहीं है। तो भी तुझे धन्यवाद देना ही चाहिए।

× × ×

आश्रम की किसी ने निन्दा की तो मुझे उसका ज़रा भी दुःख नहीं मालूम होता । किन्तु मैंने आश्रम को भस्म किया इसका कारण जो मैंने बताया उसे किसी ने न माना तो उससे मुझे दुःख अवश्य होता है । मैं जिसे पवित्र नहीं मानता उसका बलिदान क्या करूँगा ? यह बात तूने बराबर समझ ली होगी । किन्तु अपना जो होगा वह प्रसन्न मन से सहन करना है । करें ।

× × ×

मेरी गाड़ी ठीक चल रही है । ताकत आ रही है । लिखते जाना ।

ता २१—९—३४ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—७२]

फलों की खेती के प्रति दुर्लक्ष

चि०— तू मेरा निवेदन पूर्णतः समझ सकी इसका मुझे सन्तोष है । तेरे काम का विकास हो रहा-सा दिखाई देता है । विस्तार मत बढ़ाना । हाथ में लिया है उसकी जड़ गहरी जमाओ । हमारे कंगाल देश में हम धान का बीज लगाकर उस पर जीवन बिताते हैं । गेहूँ आदि धान का ही बीज है । फलों के पेड़ लगाने का हमें धैर्य ही नहीं होता । इससे वे गरीबों को मिलते ही नहीं । अमीरों को वे पोषक नहीं होते । वे सुख सुविधा के लिए खाते हैं । इसी प्रकार हम सेवा के क्षेत्र में भी अधीर होने के कारण धान पर ही संतुष्ट रह जाते हैं । इस गलती से हम ज़रा भी बच गये तो उत्तम हुए फल के पेड़ लगा देंगे और उनके फल पुश्त दर पुश्त खाये जायेंगे । आज इतना ही ।

ता —५—१ —३४ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—७१]

मेरा क्रोध : पर निन्दा : व्यवसाय और सेवा : अहिंसा : अनासक्ति

चि — तेरा पत्र मिला। तेरे प्रश्नों का समझदारी से उत्तर दे दिया तो यह सच्ची समझदारी की निशानी होगी, ऐसा पीछे ही कहा जा सकता है। मेरा क्रोध तुम किसी को मालूम नहीं हो सकता। उसका साक्षी (गवाह) मैं ही हो सकूँगा। अथवा नवीन को भी अनुभव आया हो उसकी गणना मैं क्रोध में पीछे ही करूँगा। मुझमें जो क्रोध भरा हुआ है उसमें से बहुत-सा मैं पी ही जाता हूँ। पीते-पीते जो बाकी रहा उतना ही आदि को दिखाई दिया होगा। उतना भी यदि उन्हें देखने न दिया तो ढोंगी बन जाऊँगा या सूखकर हड्डियों का कंकाल बन जाऊँगा। ऐसा नहीं होता क्योंकि मैं अपने क्रोध को जान-बूझकर भागने का रास्ता बताता जाता हूँ। मेरे निकट रहने वालों के बारे में मुझे सावधान रहने की आवश्यकता दिखाई नहीं दी। इस कारण उन्हें मेरे क्रोध का स्पष्ट दर्शन होता है और वे मुझ पर क्षमा करते हैं इसलिए मेरा क्रोध भूल जाते हैं।

के बारे में तू जैसा समझती है वैसा होने की संभावना बहुत ही कम है। किसी की निन्दा की बात पर विश्वास रखते समय बहुत विचार करना चाहिए। उसे सुना ही नहीं तो अधिक अच्छा है।

आदि के बारे में क्या होगा! उनके विचार अलग हैं मनोरथ अलग। जो प्रवृत्तियाँ उन्हें पसन्द आती हैं उन्हें सरकार चलने नहीं देती। जो चलती होंगी उनमें उन्हें प्रेम नहीं मालूम होता। प्रजा के काम में वे ही आ सकते हैं जो कहीं न कहीं बैठ सकेंगे। उनके तरह के लोगों को किसी व्यवसाय में लगकर यथाशक्ति सेवा करना उचित है। इस प्रकार बहुतों को मैंने मार्ग दिखाया है। जो प्रामाणिकता से व्यवसाय कर रहे हैं वे भी देश की सेवा करते हैं। और सेवा करते हैं ऐसा कहने वाले भार-रूप हो सकते हैं। व्यवसाय कर कमाने वाले शुद्ध सेवक हो सकते हैं।

उद्योग के बारे में जो हो सकता हो वह कर———

एक ही क्षेत्र में जमकर रहने से बनेगा तभी कुछ काम हो सकेगा। तू जहाँ रहती है वह यदि शहर का उपनगर ही हो तो वहां रहने से कोई लाभ नहीं। किन्तु अब वहाँ रह ही गई हो तो एकाएक वह स्थान न छोड़ना अच्छा। किन्तु इसमें मेरी अक्ल बेकार है ऐसा समझना चाहिए। यदि गलती से वहाँ रहना तय किया हो तो उसी में चिपके रहना न्याय नहीं हो सकता। गलती हुई ऐसा सिद्ध हुआ कि उसे सुधारना ही चाहिए।

अहिंसा के द्वारा स्वराज्य प्राप्त करा देने वाला मैं कौन? मुझमें यदि सच्ची अहिंसा वास करती होगी तो उसका संक्रम दूसरे को हुए बिना रहेगा ही नहीं। मुझ पर मेरी श्रद्धा कम है। किन्तु अहिंसा पर बहुत है। संसार को यह एक महान् सिद्धान्त मालूम हुआ है। यह आचरण में बहुत कम आता है। मुझे तो प्रतिदिन उसकी नई मिठास चखने को मिलती है। मेरे बारे में यही एक कल्पवृक्ष है। इस संसार में मेरे लिए दूसरा कुछ नहीं हो सकता। क्योंकि सत्यनारायण से मिलने का मुझे दूसरा मार्ग मिला नहीं। और उसे मिले बिना जीवन व्यर्थ मालूम होता है। अतः अहिंसा का मार्ग विकट हो या सरल मुझे उसी मार्ग से जाना है। मेरी मृत्यु के पश्चात् यदि मारकाट ही हुई तो समझना चाहिए कि मेरी अहिंसा संकुचित अथवा झूठी थी। अहिंसा का सिद्धान्त झूठा नहीं हो सकता अथवा ऐसी भी हो सकता है कि अहिंसा तक हम पहुँचें उसके पहले हमें खून की वैतरणी पार करनी होगी। २ की राजनीति में अहिंसा प्रमुख हुई। उसके बाद क्या चोरीचोरा इत्यादि नहीं हुए? सरकार ने भी अपना हाथ कहाँ रोक रखा है? किन्तु मुझे विश्वास है कि सब हिंसा होते हुए भी अहिंसा ने अपना बहुत प्रभाव डाला है। किन्तु यह समुद्र में बिन्दुमात्र है। मेरा प्रयोग आगे बढ़ ही रहा है। अपनी श्रद्धा कभी डिगने न दे। जो कुछ अपनी इन्द्रियों को दिखाई देता है वह सत्यरूप ही होता है ऐसा नहीं। बहुत बार वे असत्य ही देखती हैं। इसीलिए अनासक्ति का मार्ग खोजा गया। अनासक्ति माने इन्द्रियों के परे होना। वह उनमें रही आसक्ति छूटे तभी साध्य होगा। आँखों का प्रमाण सच मानें तो पृथ्वी सदा सपाट (समतल) सिद्ध

नहीं होगी और सूर्य नीचे के भाग के सिवा दूसरा क्या मालूम होगा ? आँखें देखती हैं नहीं तू होगी तो मेरा दिवाला ही निकलेगा। कानों से मेरे बारे में सुनती है वह सब सच समझ बैठी थी।

अब बहुत हुआ। मीराबेन का अलार्म बजा। अब प्रार्थना की घड़ी होगी। इसमें से जो चित्र तुम्हें निकालने हों निकाल लो। पन्द्रह तारीख के बाद देहली जाने का विचार है। वहाँ थोड़े दिन हरिजन आश्रम में रहने को सोचा है। अन्त में सब खेल आँखों के सामने है।

ता०—४—१२—१४ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—७४]

स्वप्न के दोष निराशा जनक है। जीव मात्र की दुर्बलता क्षमा

चि०— ...आज भी तड़के १.४५ बजे उठकर पत्र लिख रहा हूँ। आजकल दो बजे के आसपास उठने की आदत ही हो गई है। नौ बजे के पहले सोने को मिलता है। दिन में एक दो बार मिलाकर आधे से एक घंटे तक सोने को मिलता है। काफी हो जाता है—।

...स्वप्न में व्रतभंग हुआ तो उसका प्रायश्चित सामान्यतः अधिक सावधानी और जाग्रति आते ही रामनाम है। स्वप्न में होने वाले दोष अपनी अपूर्णता के प्रतीक हैं। बिना जाने ही क्यों न हो वे विषय संस्कार के किसी कोने में भोगते रहते हैं। उससे निराश होने की आवश्यकता नहीं किन्तु अधिकाधिक प्रयत्नशील होना चाहिए। निराशा विषयासक्ति का चिह्न हो सकता है अश्रद्धा का तो है ही। रामनाम लेने में जो थक जायगा—निराश हो जायगा उसकी श्रद्धा अपूर्ण ही कहनी चाहिए न ! कोलंबस के साथ रहने वाले लोगों की श्रद्धा समाप्त हुई तभी वे उसे मारने के लिए तैयार हुए। कोलंबस को श्रद्धा की आँख से किनारा साफ दिखाई दे रहा था और उसने थोड़ा समय माँगा और वह अमेरिका पहुँच गया ! न जाने योग्य वस्तु स्वप्न में जाये तो उसका भी यही अर्थ है। ऐसे स्वप्नों के

माया कारण होते हैं। उन्हें समझकर दूर करना चाहिए। 'सभी अवस्थाओं का जो साक्षी वह निष्कल ब्रह्म मैं हूँ'* ऐसा हम गाते हैं। वैसा बनने का सतत प्रयत्न करते हों तभी उसका गाना योग्य है। वैसे हम नहीं हुए हैं इसके द्योतक ये स्वप्न हैं। हमें वे दीपस्तम्भ की तरह हैं। ईश्वर की कृपा के बिना पत्ता भी नहीं हिलता। किन्तु प्रयत्न रूपी निमित्त के बिना वह हिलता भी नहीं। जीवमात्र की शुद्धतम सेवा ही साक्षात्कार है।

ता० १६—१२—३४ बापू के आशीर्वाद

[पत्र—७४]

रामनाम रामबाण है किसानों की कल्पभूमि : विषमता का सम्पूर्ण नाश असम्भव : क्रम से मिथा

चि०— अब तक बादलें आये हैं। किन्तु घना अँधेरा है। हाथ थकने गये हैं। यहाँ जंगल की तरह है। हरिजन आश्रम बसाना है। जान-बूझकर दो कोठरियाँ बनाई हैं। बाकी तीन-चार तम्बू हैं।

रामनाम रामबाण है ऐसा अटूट विश्वास मेरे पास है। तो इस तत्त्व का तुम्हें अनुभव आयेगा ही। सर्वत्र अँधेरा ही दिखाई देता हो तो भी उसका जप करते जाना; कुशल ही होगा।

किसानों के जमीन के टुकड़े का प्रश्न बहुत कठिन है। अपने हाथों में शासन आया तो भी उसे सुलझाना कठिन ही है। क्या आज अपना मनचाहा शासन बिना किया जा सकता है यह देखने का है। जमीन के ये छोटे टुकड़े भी बुद्धि लगाकर जोते गये तो उनका उपयोग हो सकता है। यह सब प्रयोग करके ही दिखाने योग्य है। अपना गुरु का ज्ञान भी संकुचित है। इससे हम पंगु की तरह हो गये हैं। इसीलिए बड़ी का प्रश्न मतलब॰ हम हाथ में नहीं लेते। तरह सुसे ऐसे और

---

* जाग्रत्स्वप्न जागर सुषुप्ति मवैति नित्यम्।
तद् ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघः॥

(मातःप्रार्थना आश्रम-भजनावली)

सहज करते बने ऐसे उद्योग ही आज हमें करने हैं। कुछ भी कर किसानों का आलस्य निकाल सकें और उद्योग के साथ बुद्धि का मिलन कर सकें तो बाकी सब अपने आप ठीक हो जायगा।

आज की अपेक्षा पहले लोगों की स्थिति निश्चय ही अच्छी थी, यह बात सिद्ध की जा सकती है। पहले बाहर से भोजन लाया जाता था। जमीन के इतने टुकड़े नहीं थे। आज की तरह धन कमाने बाहर जाना नहीं था। प्रकृति अपना काम अपने रास्ते करती थी। आज पूर्ण ज्ञान न होते हुए भी प्रकृति के काम में हम हाथ डाल रहे हैं। और वह भी एकतन की पद्धति से। उससे हम चूके जा रहे हैं। रामराज्य अवश्य कल्पना है किन्तु उसके आधार पर ऐसा कुछ न कुछ पहले था ही यह भी हम सिद्ध कर सकते हैं। और असत्य और दारिद्र्य का संपूर्ण लोप कभी नहीं था और आगे भी वह नहीं हो सकता।

पर्वत की गुफा में भाग जाने की प्रथा में उकताहट ही भरी हुई है। उसका थोड़ा-सा उपयोग होगा भी। किन्तु आज निश्चय ही नहीं है। ऐसा करते-करते मर जाना गुफा में रहने की तरह ही है।

जो बात खुद को लागू है वही दूसरे पर भी। खुद के बारे में अनासक्ति होते हुए भी शीतोष्ण का भान होगा ही। जाड़े में धूप और गर्मी में ठंडक हम खोजेंगे ही। किन्तु यह खोज सफल न हुई तो हम रोते नहीं बैठेंगे। यही अनासक्ति है। यही बात जाड़े से अकड़नेवाले औरों के बारे में। उन्हें मदद करने का प्रयत्न करेंगे। उन्हें अकड़ते हुए देखकर हमारे पास होगा वह या उसमें से कुछ हम देंगे। किन्तु इतना करने के बाद भी वे अकड़ते रहें तो वह हमें सहन करना चाहिए उससे अधीर होकर मारपीट न करनी चाहिए। प्रयत्न का त्याग न किया जाय यही अनासक्ति है। खादी पेट का सवाल है भी और नहीं भी। उसे अन्नपूर्णा कहा गया है।

हिंसा का त्याग किया तो सब से बहुत कुछ लेने लायक है ऐसा मैं मानता हूँ। जो आज अचरज सम्भव हुआ दिखाई दे रहा है वह उतना

अपनी इच्छा से होगा भी नहीं ऐसा सम्भव है। किन्तु हमारे सारे अनुमान पढ़ने पर ही होते हैं। यह ठीक नहीं। हमें अपना स्वतंत्र विचार करना ही उचित है।

विषमता का सर्वस्व नाश असम्भव है। किन्तु अधिक से अधिक समता तक पहुँचने का एक ही मार्ग मैंने दिखाया है। मैंने दिखाया वह कुछ नया नहीं। पुराना ही (कदाचित् नई पद्धति से) मैं दिखा रहा हूँ।

फुरसत के समय अतिरिक्त धंधा कर अपनी आय में वृद्धि की जा सकती है यह किसान को बहुत बड़ा आश्वासन है।

किसानों के आर्थिक हितों का संगठन होने लायक है। संघशक्ति हुए बिना आर्थिक लाभ असम्भव है यह उन्हें समझा दिया जा सकता है।

कर्म का नियम जानना सरल है। मिकेनिक्स (यंत्र-विज्ञान) में जो हम सीखते हैं वही इसमें है। जो इतर शक्तियाँ एकत्र काम करती हैं उनका एक ही इतर परिणाम हमें दिखाई देता है। यही बात कर्म की है।

तुम्हें छोटे गाँवों में जाना हो तो जा सकती है। किन्तु जो है उसी में दृढ़ता से लगी रही तो बहुत है। एक जगह पूरी सफलता मिली तो वह एक गुणन का काम करेगी। उसमें योग मात्र गुणन नहीं है।

ता० ११—१२—३४ बापू के आशीर्वाद
बिरला मिल्स देहली

[पत्र—७६]

कर्म की गति : दुखियों का इलाज : ईश्वर में श्रद्धा : प्रार्थना
वियोगी का विचार है

चि०— तेरे पत्र का उत्तर इस बार बहुत देर से दे रहा हूँ। क्योंकि समय ही नहीं है। आज लिख-लिखकर दाहिना हाथ थक गया है अतः बायें हाथ से लिख रहा हूँ।

तेरा शरीर दुबला तो हुआ ही होगा किन्तु मुझे वैसा नहीं मालूम हुआ। उपवास के कारण कमजोरी तक भी नहीं रही। रहनी ही नहीं
है

चाहिए, यदि उपवास का पारण ठीक हो सका। मैं समझता हूँ कि मेरे आहार का परिणाम मेरे शरीर पर अच्छा ही हुआ उसका विश्लेषण मैं नहीं कर सकता। माता-पिता इत्यादि मुझसे मिलकर गये, यह अच्छा हुआ।

फुंसियाँ होती हैं उसका उपाय है ही। थोड़े दिन फल और कच्चा शाक खाकर रहना। वाष्पस्नान किया कि वे तुरन्त दूर हो जायेंगी। वाष्पस्नान के बाद ठंडे पानी से स्नान करना चाहिए। तीन बार दिन में अंतड़ियाँ साफ हो जा सकती हैं। पश्चात् दूध या केवल मीठा दही और फल उसी तरह कच्चा शाक खाना चाहिए। शाक में भी मेथी, पालक चावल की भाँति सलाद के अच्छी है। मैं तो सरसों के पत्ते और अदरक भी खाता हूँ।

ईश्वर से माँगना अर्थात् अपनी इच्छा लोप करना। ईश्वर अपने से भिन्नाभिन्न है। भिन्न है क्योंकि वह संपूर्ण है। अभिन्न है क्योंकि हम उसके अंश हैं। समुद्र से अलग पड़ा हुआ बिन्दु समुद्र की प्रार्थना न करेगा तो किसकी करेगा? किन्तु समुद्र को कोई कर्तव्याकर्तव्य होता है? प्रार्थना विनीती का विकास है। उसके बिना देहधारी जीवित ही नहीं रह सकते।

राष्ट्र की प्रगति की चाबी अपने हाथ है और नहीं भी है। यदि हम सत्यवत् हों तो प्रगति होगी। सत्यवत् होना अपने हाथ है। किन्तु प्रगति अपने हाथ नहीं। क्योंकि हम सत्य हो गये फिर यह (प्रगति) एक ही, एकस्वरूप परमात्मा के हाथ है। 'ऊधो कर्मन की गति न्यारी' यह शुद्ध सत्य है। कर्म का कुछ नियम है इतना जान सकते हैं। किन्तु यह नियम कैसे काम करता है यह हमें समझ में नहीं आता। यह भी प्रभु की कृपा ही है। साधारण राजाओं के नियम भी हम नहीं जानते तो फिर नियमों की मूर्ति जो परमात्मा है, उसके नियम हम कैसे जान सकेंगे।

इस युद्ध के प्रारम्भ में जो विजय दिखाते रहे थी यह कल्पना ही थी। पराजय भी काल्पनिक ही था। सत्य की हमेशा विजय ही है ऐसी जिसकी श्रद्धा है उसके शब्दकोश में 'हार' शब्द ही नहीं है।

ता —१— १२— ४५ बापू के आशीर्वाद
वर्धा

संसार को क्या दिया देगा, यह तेरे मन में शंका है। है न? मारकर ऐसा अवतार निर्माण करने की अयोग्यता ही है, यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं है। हम सब अंश रूप से तैयारी करें तो ऐसा अवतार कभी न कभी प्रगट होगा ही। फिर मुझे सेवा के सम्बन्ध में ऐसा प्रश्न पूछना न पड़ेगा।

सरकार अंध है। किन्तु उसे चलानेवाले तो मालिक नहीं हैं न?•

नाचन अथवा नृत्य देखने में दोष नहीं यदि वे अश्लील न हों। किन्तु अपने लिए कोई दूसरा पैसे दे और हम देखने जायँ, यह लज्जा-जनक जरूर है। एक को कोई पैसे दे देगा। बहुतों को कौन देगा! हम तो बहुत हैं। इस विषय में सबको अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार चलना चाहिए।

कुएँ की सफाई का प्रश्न बहुत बड़ा है। कुएँ की सीढ़ियाँ यदि हम कर सकें तो बहुत बड़ा काम हो गया, ऐसा कहा जा सकता है।

तेल निकालने की क्रिया मुझे ठीक लिखकर भेजो। मैं उसे आजमाकर देखूँगा।

परीक्षिका चुनी गई। उसके लिए प्रश्न होनेवाली फीस का हिस्सा वह दे और प्रश्नपत्र मौलिक और सरल निकाले। (स्त्रियों के) मासिक धर्म के बारे में मैंने जो लिखा वह ठीक है। ×वैसी निर्विकार दशा आने में बहुत समय लगता है। यह विकार इतनी सूक्ष्म वस्तु है कि उसे हम हमेशा ही पहचान नहीं पाते।

जवाहरलाल को छुड़ाने का आन्दोलन सुशील करे, यह ठीक है।

(केन्द्रीय) असेम्बली के मत का आदर नहीं किया जाता इसके लिए मुझे निराशा नहीं मालूम होती। यह परिणाम मेरे ध्यान में था ही। किन्तु यह प्रयत्न आवश्यक था और है।

•'सरकार' का हृदय परिवर्तन कैसे होगा? 'सरकार तो अन्ध है। अन्ध को हृदय कहाँ' इस प्रश्न का उत्तर।

× निर्विकार स्त्रियों का मासिक धर्म बंद हो जायगा, यह महात्मा जी का मत है।

आवश्यकता नहीं होती। अतः मैंने प्रवीण के लिए उसे लिखा है। जो चाहें खाते हैं। प्याज के बारे में विचार इतने ही परिमाण में परिवर्तित हुए हैं कि जो उसे दवा के लिए खाते हैं उनके ब्रह्मचर्य में उससे अड़चन न होगी। किन्तु इसके लिए मेरे पास कोई प्रमाण नहीं है।

लाठी आदि की शिक्षा से अहिंसा वृत्ति ढीली पड़ने की सम्भावना तो अवश्य है। लाठी रक्षा के लिए सिखाते हैं न। किन्तु जो सिखाना चाहता है उसे उसका उपयोग न सिखाने का नियम बनाने की इच्छा नहीं होती।

सफेद खादी की जगह रंगीन इस्तेमाल ही नहीं करनी चाहिए, ऐसा मैंने लिखा नहीं है। लिखा हो तो उसे गलत समझना।

स्वराज्य मिलने पर बहुत सी बातों में इतना अन्तर पड़ेगा कि आज रियासतों के बारे में कुछ कहना कठिन है। किन्तु सामान्यतः रियासतों की शक्ति का स्वराज्य कम रोक न सकेगा ऐसा कहा जा सकता है।

लालस सोनार वगैरह को पैसा समझना चाहिए। कल इन्दौर जा रहा हूँ। २५ को लौटूँगा।

ता० ८—४—३५ बापू के आशीर्वाद

वर्धा

[पत्र ७६]

अरविन्द बाबू, आत्मसिद्धि, ईश्वर का स्वरूप

चि० … अरविन्द बाबू के बारे में मैं कुछ भी कहने में असमर्थ हूँ। जिनको … का भी अरचने लगा है उसे गुरु … न होगा और जिनको … न रुच है उनका यह होगा यह कौन जानता है? मेरे लिए … इतना ही कहा जा सकता है। इसी संसार का आत्मा- … इतना तो अवश्य कबूल करना पड़ेगा कि अरविन्द बाबू के … होनेवाले तो भी आदमियों में ऐसे लोग हैं जिनके

[पत्र—८०]

पति की मृत्यु की कामना। ट्रस्टी धनिक। दूसरों को जगाने का काम

चि० —, तेरे सुन्दर पत्र का उत्तर तुरन्त देने लायक नहीं था। दाहिने हाथ को जब विश्रान्ति की आवश्यकता होती है तब काम हो ही नहीं सकता।

—— भूकम्प का पाप से क्या मतलब है यह मैं 'हरिजन' में लिख चुका हूँ। देखो। बिहार में किसी को भी क्षोभ नहीं था। इतना ही नहीं सबको मालूम हो गया था कि वह पाप का फल है। ऐक्य के सिद्धान्त से यह सब पैदा होता है। साँप वगैरह के बारे में भी 'हरिजन' में लिखा है, वह पढ़ो। आजकल लिखा जानेवाला 'हरिजन' आती न हो तो उसे लेकर ध्यान से पढ़ती जाना। यह मेरी सिफारिश है। तेरे पास तो आता ही होगा।

जो पति (ऐसी) बीमारी से पीड़ित है जो सेवा से भी शान्त नहीं हो सकती, उसकी मृत्यु की इच्छा करने में मुझे पाप नहीं दिखाई देता। किन्तु पति को यदि शुद्धि की जरूरत हो तो उसे पूछना चाहिए। उसे पीड़ा होती होने पर भी यदि उसे जीवित रहने की इच्छा हो तो उसे जीवित रहने देना चाहिए।

मालिक का ट्रस्टी (निरबात) बनना माने माल का एक निश्चित भाग रखकर बाकी का सब गरीबों की भले स्टेट को (सरकार को) या इसी प्रकार की लोकोपयोगी संस्था को दे देना। ज्यों ही सब स्टेट को दे दिया तो किसी को शासन करने का अवसर ही न रहेगा। और मनुष्य-मात्र वह श्रेय बन जायगा।

धनिक लोगों के साथ मेरा सम्बन्ध रहेगा ही। मैं उन्हें बुरा नहीं मानता और गरीबों को देवदूत नहीं मानता। ऐसे बहुत से श्रीमान् लोग पूर्व-पश्चिम में हैं जो केवल परोपकारार्थ ही कमाते हैं। वे पूज्य हैं। ऐसे बहुत से गरीब मुझे मालूम हैं कि जिनका नाम लुटेरा है। मेरी कल्पना के स्वराज्य में शेर और बकरी एक तालाब में एक ही

अन्न यानी पीछे होने चाहियें। यह कल्पना हो तो क्या हुआ। मुझे क्या चाहिए, यह भी यदि मैंने न समझा तो मैं प्रयत्न किसलिए करूँ!

यह बात सच है कि मैं आदमियों को ठीक पहिचानता नहीं। किन्तु दूसरे जो 'हम पहिचानते हैं' ऐसा कहते हैं वे भी कहाँ पहिचानते हैं? मेरे अज्ञान का मुझे खेद नहीं। आदमियों को मैं नहीं पहिचानता, इसलिए मैं उन पर विश्वास रखता हूँ।

उसे किसी ने पूछा तो मेरे बारे में तुझे उत्तर देना ही पड़ेगा ऐसा क्यों है? 'मैं उत्तर नहीं दे सकती। उनके कार्य और उनके विचार मुझे पसन्द आते हैं। जो पसन्द आता है उसके पसन्द आने के कारण हमेशा थोड़े ही दिये जा सकते हैं। अतः जो पूछना हो वह उन्हीं से पूछिए।' ऐसा क्यों नहीं बताती? ऐसा उत्तर दिया तो बहुत सी झंझट से मुक्त हो जायगी। मुझसे कोई वस्तु ली और उसे पचा सकी हो तो अवश्य दूसरों को दे। जो हमने पचाया वह दूसरे का है ही नहीं वह अपना हुआ। जो अपना हुआ उसके बारे में शंका न होनी चाहिए और उस विषय के उत्तर अपने पास होने ही चाहियें।

ता २१—६—४५ बापू के आशीर्वाद
वर्धा

[पत्र—८१]

कष्ट का उदाहरण। भक्ति का दृष्टिबिन्दु

चि॰— पत्र पूरे करने के लिए आज दो घंटे का मौन धारण किया है। अभी एक के पीछे एक पत्र समाप्त करते-करते तेरा ४—७—४५ का पत्र हाथ में आया है।

विकार के बारे में दूसरी कौन-सी पुस्तक है?

अब तेरा प्रश्न। कष्ट का उदाहरण नमूना बनकर आगे रखने में भय है। एक तो यह कि हमें प्रत्यक्ष अनुभव नहीं। दूसरा यह कि उसे

बहुत समय नहीं बीता। और तीसरा पैसा कि जहाँ भी हो रहा है वह जबरन् कराया जाता है? अतः हम रूप को छोड़कर विचार करें। हमने इतनी बात अनिवार्य ठहराई है—हिंसा के द्वारा कुछ नहीं करना कराना भी नहीं। अतः अमीरों से प्यार प्राप्त करने का सबसे सरल मार्ग यह है कि उनसे खुद प्राप्त किये धन का अच्छा से अच्छा उपयोग कराना चाहिए। इससे ऐसा फल उत्पन्न होगा कि वैसा करने से वे बहुत धनो पार्जन करने का मोह ही छोड़ देंगे। वैसा फल हुआ तो हमें नहीं और न हुआ तो भी ठीक ही है। उलटे इतना धन इकट्ठा करने की अड़चन न करते हुए भी उसका उपयोग करने को मिलता है। बहुत से अमीर यदि ट्रस्टी हो गये तो हमें कुछ बताने की आवश्यकता ही नहीं। तेरे तर्क के पीछे यह सन्देह खड़ा है कि अमीर अपनी मिलकियत के ट्रस्टी कभी होंगे ही नहीं। यह सन्देह सच हो तो भी हमें नहीं। क्योंकि अन्त में सत्य की विजय निश्चित है। जो आवश्यकता से अधिक मिलकियत एकत्र करता है वह चोरी करता है और चोरी का धन कब्जा पाता है। वह पच नहीं सकता। अन्त में वह चोर की मिलकियत न रहेगी। ऐसा विश्वास रखकर अपने अहिंसक उपाय करते ही जाना चाहिए।

अभी समाधान न हुआ तो फिर पूछा। तेरा प्रश्न मार्के का है। और अहिंसा यदि तू पूरी तरह समझ गई हो तो मेरा उत्तर तुझे खुद मालूम होना ही चाहिए।

ता० १२—८—१४ बापू के आशीर्वाद

वर्धा

———

[पत्र—८२]

बन्दर से मनुष्य : आततायी की हत्या : अहिंसा से प्राप्त सत्ता : अहिंसक और हिंसक का सेवाक्षेत्र

चि — राखी समय पर मिली थी। कुमार के हाथ के बने कागज मिले। अच्छे हैं। ——— *कताई मिली। उसका उपयोग करूँगा। मेरा सूत बहुत-सा जमा हुआ है। उस पर बहुतों की नजर पड़ने लगी है। किन्तु मेरी कताई क्या? २१ तार हो गये कि उस दिन दिवाली। बेरी गोरखे कई तरह के आते हैं ऐसा आज तक मुझे मालूम हुआ है। जिस गोरखे से मैं लिख रहा हूँ वह बेरी माना जाता है। पता लगाऊँगा।

मेरी विचार-धारा की एक बात ध्यान में रख तो सब कुछ समझ में आ जायगा। मेरी तटस्थता का प्रश्न कब आयेगा; वह उसके काम के बारे में है काम के बारे में कदापि नहीं। कुछ परिणाम के बारे में भी नहीं। अमीर बन जाओ या न जाओ इस कथन के पीछे फल के बारे में बेदरकारी नहीं उसके बारे में निश्चिन्तता है। अपना रखा हुआ कदम ठीक होगा तो आज या कल उसका फल होगा ही।

बन्दर से मनुष्य उत्पन्न हुआ यह बात मेरे गले नहीं उतरती। पहिले मनुष्य की देह धारण करने वाले जीव ने बन्दर वगैरह की देह धारण की होगी इसमें सन्देह नहीं।

आततायी की हत्या करना मुझे पसन्द नहीं। आततायी किसे समझा जाय।

खूनी वगैरह लोगों को जेल में बन्द करना पड़ेगा ऐसा कम से कम आज तो मुझे मालूम हो रहा है। किन्तु यह अहिंसा है ऐसा मैंने कभी कहा हो मुझे याद नहीं। मैं ऐसा तो जरा भी नहीं मानता। मैंने ऐसा कहा है कि आज की परिस्थिति में यह अनिवार्य होगा। इसका अर्थ

---

*अस्पताल के मित्रों के द्वारा काते गये सूत की लच्छी महात्मा जी को भेंट में भेजी गई थी।

बहुत समय नहीं बीता। और तीसरा ऐसा कि जहाँ जो हो रहा है वह जबरन् कराया जाता है। अतः हम इस को छोड़कर विचार करें। इसमें इतनी बात अनिवार्य ठहराई है—हिंसा के द्वारा कुछ नहीं करना कराना भी नहीं। अतः अमीरों से त्याग प्राप्त करने का सबसे सरल मार्ग यह है कि उनसे खूब प्राप्त किये धन का अच्छा से अच्छा उपयोग कराना चाहिए। इससे ऐसा फल उत्पन्न होगा कि ऐसा करने से वे बहुत धनोपार्जन करने का मोह ही छोड़ देंगे। ऐसा फल हुआ तो हर्ज नहीं और न हुआ तो भी ठीक ही है। उनके इतना धन इकट्ठा करने की खटपट न करते हुए भी उसका उपभोग करने को मिलता है। बहुत से अमीर यदि ट्रस्टी हो गये तो हमें कुछ बताने की आवश्यकता ही नहीं। तेरे तर्क के पीछे यह सन्देह छिपा है कि अमीर अपनी मिलकियत के ट्रस्टी कभी होंगे ही नहीं। यह सन्देह सच हो तो भी हर्ज नहीं। क्योंकि अन्त में सत्य की विजय निश्चित है। जो आवश्यकता से अधिक मिलकियत एकत्र करता है वह चोरी करता है और चोरी का धन पचा पाता है। यह पच नहीं सकता। अन्त में वह चोर की मिलकियत न रहेगी। ऐसा विश्वास रखकर अपने अहिंसक उपाय करते ही जाना चाहिए।

अभी समाधान न हुआ हो तो फिर पूछना। तेरा प्रश्न महत्व का है। और अहिंसा यदि तू पूरी तरह समझ गई हो तो मेरा उत्तर तुझे खूब मालूम होना ही चाहिए।

ता० १२—८—४१ बापू के आशीर्वाद

वर्धा

———

[पत्र—८२]

बन्दर से मनुष्य : आततायी की हत्या : अहिंसा से प्राप्त सत्ता : अहिंसक और हिंसक का भेदाभेद

चि०— राखी समय पर मिली थी। कुबर के हाथ के बने कागज मिले। अच्छे थे। *****कवाली मिली। उसका उपयोग करूँगा। मेरा रस बहुत-सा जमा हुआ है। उस पर बहुतों की नजर पड़ने लगी है। किन्तु मेरी कमाई क्या ? १६ तार हो गये कि उस दिन दिवाली। देशी नौरके कई तरह के आते हैं ऐसा आज तक मुझे मालूम हुआ है। जिस नौरके से मैं लिख रहा हूँ वह देशी माना जाता है। पता लगाऊँगा।

मेरी विचार धारा की एक बात ध्यान में रख लो सब कुछ समझ में आ जायगा। मेरी तफरमता का फल कब आयेगा; यह उसके काल के बारे में है काम के बारे में कदापि नहीं। शुभ परिणाम के बारे में भी नहीं। अमीर धन छोड़ें या न छोड़ें इस कथन के पीछे फल के बारे में बेदरकारी नहीं उसके बारे में निश्चिन्तता है। अपना रखा हुआ कदम ठीक होगा तो आज या कल उसका फल होगा ही।

बन्दर से मनुष्य उत्पन्न हुआ यह बात मेरे गले नहीं उतरती। बल्कि मनुष्य की देह धारण करने वाले जीव ने बन्दर वगैरा की देह धारण की होगी, इसमें सन्देह नहीं।

आततायी की हत्या करना मुझे पसन्द नहीं। आततायी किसे समझा जाय।

तुमी वगैरा लोगों की जेल में बन्द करना पड़ेगा ऐसा कम से कम आज तो मुझे मालूम हो रहा है। किन्तु यह अहिंसा है ऐसा मैंने कभी कहा हो मुझे याद नहीं। मैं वैसा तो कदा भी नहीं मानता। मैंने ऐसा कहा है कि आज की परिस्थिति में यह अनिवार्य होगा। इसका अर्थ

*स्वर्गीय मित्रों के द्वारा काते गये सूत की राखी महात्मा जी को भेंट में भेजी गई थी।

इतना ही कि मेरी अहिंसा अभी बहुत अपूर्ण है। और इसीलिए सूत वगैरा की तरह की हिंसा पर मुझे मार्ग नहीं मिला। पतन को पतन समझकर देखने में ही रक्षा है।

अहिंसा के बिना प्राप्त की हुई सत्ता में दरिद्रनारायण का स्वराज्य होगा ही नहीं। स्वराज्य की प्राप्ति में जितने परिमाण में अहिंसा होगी उतने परिमाण में दरिद्रों का दारिद्र्य दूर हो जायगा। पूर्ण अहिंसा मुझमें नहीं तुममें नहीं और किसी में भी नहीं। किन्तु अहिंसा माननेवाले रोज अधिकाधिक अहिंसक होते जायँगे और उससे उनका सेवा-क्षेत्र बढ़ता जायगा। जो हिंसा के पुजारी होंगे उनका क्षेत्र संकुचित होता जायगा और वह अन्त में उन्हीं तक रह जायगा।

ता० १०—८—३८ बापू के आशीर्वाद
वर्धा

(पत्र—८१)

रक्तपित्त के रोगी को जबर्दस्ती नपुंसक बनाना। विदेशों में प्रचार कार्य

चि०— आज तुझे पत्र लिखना ही पड़ेगा। बायाँ हाथ केवल सोमवार को हरिजन लिखने के लिए काम में लाता हूँ। और दिन बायें हाथ से लिखता हूँ। ऐसा करने में समय तो बहुत जाता है। उसमें तेरे पत्र का उत्तर तुरन्त देना चाहिए। १६ तारीख के लगभग जरूर आना। सोचा-सोचा कर मुझे चाहे जितना समय दूँगा। घूमने जाते समय लिया तो बच जायगा या नहीं? यहाँ आते समय सूखे के दिन तय न कर आओ तो अच्छा। दो दिन अधिक गये तो जायँ। यहाँ बैठे तुम काम भी करोगी तो अच्छा और अपनी बातें भी सुविधा के साथ हो तो अच्छा।

तेरा प्रश्न में इजिप्ट का पुस्तक पढ़ रहा हूँ। लेकिन की भी

यह पत्र महात्मा जी ने दूसरे के हाथ से लिखवाया है।

की लिखी हुई पढ़ी। हिटलर के बारे में दूसरी पुस्तक मँगा रखी है।

मीरापदी का वज़न आकर्षक है। तुमसे ईर्ष्या करने के कितने ही कारण हैं।

एकत्रित बछियों की तरह जो लोग सिमटे हुए हैं उन्हें बधिया नपुंसक बनाने की प्रथा स्वीकार करने में कई अड़चनें आती हैं। उससे कई तरह के अनर्थ हो सकते हैं। और किसी भी रोग को असाध्य मान लेना भी ठीक नहीं। संयम का प्रचार करना जितना फल प्राप्त कर सकते हैं उतने से सन्तुष्ट रहना यही मुझे सही रास्ता मालूम होता है। कदम-कदम पर मुझे कायरता की गंध आती है। कायर कातनेवाला सूत के उलझाव को चाकू से निकाल लेगा। और कुशल कारीगर लगन से और कुछ सब्र से सुलझायेगा, सूत अविच्छिन्न बनाये रखेगा। इसी प्रकार का कोई उपाय अहिंसक मनुष्य असाध्य समझे गये रोगों से पीड़ित लोगों के लिए खोजेगा।

विदेशों में अपना नियमित प्रचार-कार्य या बैलगाड़ी की रेल से लगी दौड़ मालूम होती है। इस प्रचार-कार्य में यदि हजार खर्च कर सकें तो विरोधियों को एक करोड़ खर्च करने की सामर्थ्य है। अतः मेरा विश्वास है कि हम अपने आप स्वतः होनेवाले प्रचार-कार्य से सन्तोष करें

ता० २४—६—३६ बापू के आशीर्वाद

वर्धा

[पत्र—८४]

ब्रह्मचर्य

चि० — हम आठ तारीख मंगीपुर जा रहे हैं।

तुम्हें अपने अनुभव लिखते रहना चाहिए। कांग्रेस के फार्म पर दस्तखत करनेवालों के बारे में अपने मन में सन्देह हुआ तो हम उन्हें कुछ मना नहीं कर सकते। अलग-अलग तरीके कर आदमी कांग्रेस में भरती हो ही जायेंगे। अन्त में अच्छे आदमी अधिक होंगे तो ही कल्याण होगा।

महाराष्ट्रीय मां के पत्र की बात एक दम सच है किन्तु उनकी कल्पना साफ झूठ है। लड़कियों के कंधे पर हाथ रखकर मैं अपनी विषय तृप्ति करता था यह उस लेखक के पत्र का अर्थ किया जा सकेगा। उसका कथन तो निराला ही था। किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि लड़कियों के कंधे पर हाथ रखना मैंने बन्द कर दिया इससे मेरी विषय-वासना का सम्बन्ध नहीं। उसकी उत्पत्ति तो केवल परे-वश निरपेक्ष लाने में थी। मुझे लाभ हुआ किन्तु मैं जाग्रत था और मन भी कब्जे में था। मुझे कारण मालूम हुआ और मैंने डाक्टरी विभाग लेना बन्द कर दिया। और आज तो मेरी स्थिति पहले थी उससे यदि अधिक अच्छी स्थिति की कल्पना हो सकती है तो वैसी है। इस बारे में तुम्हें अधिक पूछना हो तो पूछ सकती है क्योंकि तुमसे मैंने बड़ी-बड़ी आशाएँ रखी हैं। अतः तुम्हें म। प्यार से जो कुछ मेरे बारे में जानना हो जान ले। अभी जो लेख मैंने लिखे हैं वे अच्छे विचार करने लायक हैं। यदि तुमने यह समझा हो तो ब्रह्मचर्य का मार्ग सीधा हो जाता है। जननेन्द्रिय स्त्रियों के उपभोग के लिए नहीं यह बात यदि स्पष्ट हुई तो सारी दृष्टि ही बदल जाती है। जिस तरह किसी को रास्ते में जमरीजी के रक्त का वमन दिखाई दे और उसी के साथ वह उसे रत्न समझकर हाथ में लेने के लिए उत्सुक हो और फिर यह वमन है ऐसा समझते ही वह शान्त हो जाय यही बात जननेन्द्रिय के उपयोग के बारे में है। वस्तुस्थिति यह है कि यह मत इतना दृढ़ और स्पष्ट कभी नहीं था। और अब तो नई शिक्षा इस मत का विरोध करती है। नई शिक्षा सीमित विषय सेवन को सद्गुण समझती है और उसकी आवश्यकता है ऐसा समझती है। इस सब पर विचार करके देखो। बहिनों को अनुभव तूने भेजा है उसे अच्छा कहा जा सकता है।

ता १—२—४५

बापू के आशीर्वाद

[पत्र—८५]

मेरे ब्रह्मचर्य की अपूर्णता : वर्तमान विचार-धारा

चि०— नयीयुग में रोज की डाक रोज समाप्त की जाती है, ऐसा कहा जा सकता है। तेरा ता० १८ का पत्र कल शाम को मिला। उसका उत्तर आज दे रहा हूँ।

तूने प्रश्न ठीक पूछा है। इससे भी अधिक स्पष्टता से तू पूछ सकती है। मुझे हमेशा स्खलन होता आया है। दक्षिण अफ्रिका में तो उसमें साल-साल का अन्तर पड़ता होगा। मुझे ठीक याद नहीं। यहाँ महीने महीने का अन्तर पड़ता है। स्खलन होने का उल्लेख मैंने अपने दो-चार लेखों में किया है। मेरा ब्रह्मचर्य यदि स्खलन-रहित होता तो मैं संसार के सामने कितनी ही अधिक बातें रख सकता। किन्तु जिसने १५वें वर्ष से लेकर ३०वें वर्ष की अवस्था तक अपनी पत्नी से ही क्यों न हो, विषयोपभोग किया है वह ब्रह्मचारी बना तो भी वीर्य का पूर्णतः अवरोध कर सकेगा यह लगभग असम्भव मालूम होता है। जिसकी संग्राहक शक्ति प्रतिदिन क्षीण होती गई है वह एकाएक वह शक्ति प्राप्त न कर सकेगा। उसका मन और शरीर दोनों दुर्बल हुए रहते हैं। अतः मैं अपने आपको अत्यन्त अपूर्ण ब्रह्मचारी समझता हूँ। किन्तु जिस तरह उजाड़ देश में एरंड वृक्ष,—वही मेरी स्थिति है। यह मेरी अपूर्णता संसार को मालूम है।

बम्बई में मुझे जिस अनुभव ने तंग किया, वह विचित्र और अत्यन्त दुःखदायी था। मुझे स्खलन होते थे किन्तु वे सब स्वप्नावस्था में। मैं उनसे चिंतित न हुआ। उन्हें मैं भूल भी जाता था। किन्तु बम्बई का अनुभव तो जाग्रत अवस्था में हुआ और उसमें स्त्री-समागम की एकाएक उत्पन्न हुई इच्छा थी। वह इच्छा पूर्ण करने की वृत्ति जरा भी नहीं थी मूर्छा जरा भी नहीं थी। शरीर पर पूरा कब्जा था। किन्तु प्रयत्न करने पर भी इन्द्रिय में उत्तेजना था। अनुभव नया था और अशोभन था

उसका कारण मैंने बताया ही है। वह कारण दूर होते ही इन्द्रिय-जागृति बन्द हो गई। अर्थात् जाग्रतावस्था में बन्द।

मुझमें अपूर्णता होने पर भी एक वस्तु सुसाध्य हुई है। वह यह कि मेरे पास हजारों स्त्रियाँ सुरक्षित रह सकी हैं। ऐसे अवसर मेरे जीवन में आये हैं कि उस समय अमुक स्त्रियों को विषय-वासना होने पर भी उन्हें अथवा मुझे कहो ईश्वर ने बचाया है। यह ईश्वर की कृति है ऐसा मैं शत-प्रतिशत समझता हूँ। इससे मुझे इस बात का जरा भी अभिमान नहीं मालूम होता। यह मेरी स्थिति मरणान्त तक कायम रहे यह ईश्वर के पास मेरी नित्य की प्रार्थना है। शुकदेव की स्थिति प्राप्त करने का मेरा प्रयत्न है। वह मैं प्राप्त नहीं कर सका हूँ। वह स्थिति प्राप्त हुई तो मैं वीर्यवान होकर भी नपुंसक हो जाऊँगा और स्खलन असम्भव होगा।

किन्तु ब्रह्मचर्य के बारे में आजकल मैंने जो विचार प्रदर्शित किये हैं उनमें कोई न्यूनता नहीं अतिशयोक्ति नहीं। आदर्श तक प्रयत्नों से चाहे जो स्त्री पुरुष जा सकता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि हम [illegible] का [illegible] जीवित हम ही [illegible] अथवा हजारों आदमी पहुँच [illegible] हमें [illegible] । [illegible] हो तो भले ही लगें। तो भी यह वस्तु सत्य [illegible] होनी ही चाहिए। मनुष्य का अभी बहुत मार्ग चलना है। अभी उसकी प्रकृति पशु की है, केवल आकृति मनुष्य की [illegible] बिना [illegible] है ऐसा मालूम होता है। [illegible] से [illegible] बहिनों धर्म के बारे में जिस प्रकार [illegible] ब्रह्मचर्य [illegible] मैं समझा।

[illegible] हम हैं वे प्रयत्न नहीं करते। [illegible] होने पर भी स्खलन होने देना [illegible] नहीं चाहिए। ऐसों को दूसरा उपाय [illegible] मिताचारी बनना चाहिए। [illegible] समझता है अतः कृत्रिम उपायों से [illegible] धर्म का पालन करना चाहता है। इसके

किन्तु मेरी आत्मा विद्रोह करती है। विषयासक्ति संसार में रहेगी ही किन्तु जगत् की प्रतिष्ठा ब्रह्मचर्य पर है और रहेगी।

ता० २१—५—३६ बापू के आशीर्वाद
सन्दीपुर्व

[पत्र—८६]

भावना और श्रद्धा : प्रार्थना का लाभ : जंगली लोगों में धर्म-प्रचार

चि०— भाग्य, पालक तेल आदि के बारे में अमन से प्रचार करते रहना। ये चीजें मंहगी होने पर भी सस्ती समझना। हम नया अर्थशास्त्र बना रहे हैं। प्रत्येक देश का अर्थशास्त्र स्वतन्त्र होता है। अतः तू निराश मत हो।

किसी समाधिस्थ मनुष्य के जीवित रहने पर श्रद्धा न बैठी तो उसे मृत देह समझ कर अग्नि-संस्कार करने लगने के प्रसंग में जितना तथ्य है उतना ही ईश्वर पर श्रद्धा बैठने तक नास्तिक होने में है। भावना और श्रद्धा में भेद हो तो भावना न होते हुए भी श्रद्धा जमाने के लिए भावनिष्ठता पूर्वक प्रार्थना के लिए बैठने में लाभ है।

जंगली लोगों में हम रहते हों तो हमें अपने धर्म का प्रचार न कर नीति-धर्म का प्रचार करना चाहिए। जब उनका हृदय-द्वार खुले तब उन्हें जो पसन्द करना होगा वह वे करेंगे। हमें तो उन्हें सभी धर्मों का सामान्य ज्ञान दे देना चाहिए।

ता० २४—५—३६ बापू के आशीर्वाद
सेगाँव वर्धा

[पत्र—८७]

सत्य का सापेक्षिक ज्ञान : वर्ण-धर्म : नवीन युगधर्म

चि० — तेरी राखी मुझे नहीं मिली। मिली होती तो मैंने वह अवश्य बाँधी होती। किन्तु तूने वह भेजी अतः मुझे उसका फल अथवा पुण्य प्राप्त ही हो गया।

'सिगौन के अनुभव'* में वृद्धि की जा सकती है किन्तु अभी नहीं। फुरसत भी नहीं और इच्छा भी नहीं। किसी को बताने लायक अनुभव है ऐसा नहीं मालूम होता।

जो भाषा आदमी इस्तेमाल करते हैं उसका अर्थ स्पष्ट ही होगा ही। किन्तु भाषा इस्तेमाल करनेवाले का शुद्ध अर्थ उसमें होगा। वह आगे पीछे के सन्दर्भ से निकाला जा सकता है। सत्य को संपूर्णतः किसी ने नहीं जाना अतः भिन्न-भिन्न वस्तु को मनुष्य जैसे देखेगा वैसे ही यदि उसने बताया तो उसके बारे में वह सत्य है। फिर सच में वह भले असत्य ही हो। इसी तरह युग-युगान्तरों में एक ही वस्तु के बारे में विचार बदलते जायेंगे और वे ही उसी युग के लिए सत्य माने जा सकेंगे। यह अर्थ या विचार 'सत्यो या सद्‌समन्वय' में समाया है।

जहाँ ऊँच-नीच की भावना ही उठ जाती है वहाँ शूद्र तीन वर्णों की सेवा करे तो उसमें मुझे दोष नहीं दिखाई देता। शूद्र कमानेवाला यदि कोई परिचर्या-धर्म ही तो उसे बदलने की क्या आवश्यकता। ब्राह्मण और भंगी के ज्ञानी होने में कोई फर्क नहीं। मेरी कल्पना में वर्तमान वर्णों में ज्ञान का किसी का ठीका नहीं। अपनी स्त्रियों की प्रार्थना के श्लोकों पर विचार करो। उसमें चार वर्णों के सामान्य धर्म क्या हैं। ज्ञानदेव वगैरा के वचनों में ऊँच-नीच भावना का समर्थन करने वाले वचन भले ही मिल जायें। दो-चार वचनों से किसी का उचित न्याय नहीं किया जा सकता। रामदास के बारे में तू क्या बताना चाहती है वह मुझे मालूम है। वह उदाहरण अयोग्य है।

---

*'हरिजन' में प्रकाशित एक लेख।

ऐसा सिद्ध हुआ तो भी मेरे तर्क में बाधा नहीं पहुँचती। तेरी प्रार्थना* मैं स्वीकार नहीं कर सकता। क्योंकि उस प्रार्थना की योग्यता का तूने विचार नहीं किया है। बहती धार में बहती गई है। तू, मैं और सब अपने अपने माँ-बाप की पोखर में ही रहते आये हैं। वह भूल कर नया करना लेने में जितना पाप अथवा अनर्थ है उतना ही पुरानी पोखर के त्याग में है। हम उस पोखर में रहकर अनेक परिवर्तन कर सकते हैं। इसी का नाम प्रगति अथवा उन्नति है। एक दम नया दिखाई देना मानो उत्पात या नया धर्म। हिन्दू-धर्म की भी क्या पोखर होगी या नहीं? सबके पानी में रोज नये अक्षर निकालते हैं और निकाले कि गायब हो जाते हैं। इसमें भी उनके लिए खिलवाड़ होता ही है। ऐसा खिलवाड़ तुझे करना है? किन्तु पुरानी पोखर में १७ वर्ष तक पड़े हुए मुझको तू पानी में लकीरें खींचने के लिए कैसे खींच सकती है? मैं किनारे पर खड़ा होकर तेरा और तेरे तमाम लोगों का खेल देख रहा हूँ ——।

——मेरा अज्ञान+ तुझे अच्छा मिल गया। अभी अधिक खोज करेगी तो इससे भी गहरा अज्ञान मिलेगा। किन्तु जब मेरा पूरा अज्ञान तुझे मालूम होगा तब तू भाग तो नहीं जायगी? इतना वचन देगी तो मैं यह बोलूँगा कि मैं कुछ भी नहीं समझता। क्योंकि मैंने उसका अध्ययन नहीं किया। साम्यवाद के बारे में मेरे समाधान के लायक मैंने पढ़ा है। स्वराज्य में जिसकी आवश्यकता होगी वह स्वराज्य दिखाई देगा, तब कहूँगा। मेरा जो विरोध तुझे दिखाई देगा वह सत्यात्मक हिंसा अहिंसा के अनुसार ही होगा।

ता० १०—८—११ बापू के आशीर्वाद

---

* अपना पुनर्लग्न कराने के बारे में।

\+ समाजवाद के साहित्य के बारे में।

[पत्र—८८]

गाँवों की सेवा : घी-दूध का आग्रह : गृहस्थाश्रम और स्वावलम्बन : ब्रह्मचर्य : नारी-स्वातंत्र्य की अनुचित दिशा

चि०— जान पड़ता है, तेरी अच्छी ही परीक्षा हो रही है। देहाती लोगों के पेट में पैसे खोंसना यह बात अच्छा है और नहीं भी। वे यदि अपना कमाया हुआ सुनेंगे तो बिना पूँजी के या थोड़ी पूँजी के समस्त देहात की आम बुनाई चलायी जा सकती है। इसमें देहात का शोषण करनेवालों की आय नहीं मिली। किन्तु हम कहें यह उन्होंने नहीं किया तो—मानो हम कहें उनकी मेहनत ही उन्होंने नहीं की, सिवायें और वे उद्योग न सीखें तो आय बढ़ना कठिन है इतना ही नहीं असम्भव है। दूसरी एक बड़ी अड़चन यह है कि देहात में इने-गिने आदमी ही जाते हैं और वे भी बिना अनुभव के। उनके शरीर देहात में रहने लायक कसे हुए नहीं होते।

देहाती लोगों का स्वभाव उन्हें ज्ञात नहीं होता। उनकी आवश्यकताओं के बारे में पूरा अज्ञान होता है उनका दुख का हाल नहीं चलता और बुद्धि भी वे चला नहीं सकते। स्कूल-कालेजों में प्राप्त किया हुआ ज्ञान देहात में जरा भी उपयोगी नहीं। ऐसी अवस्था में धीरज रखने की आवश्यकता होती है। आत्म विश्वास की जरूरत पड़ती है; इनके साथ शरीर स्वस्थ हो तो अन्त में देहात की आर्थिक स्थिति सरकारी मदद न लेते हुए भी बहुत कुछ अंशों में—पचास प्रतिशत कहिए—सुधारी जा सकती है। ५ प्रतिशत में कम से कम कहता हूँ। मेरी समझ में तो ६ प्रतिशत सुधारी जा सकती है। शरीर सुधार समाज सुधार और नैतिक सुधार ये तीन बातें प्रमुख हैं। इनमें सरकारी मदद की कोई आवश्यकता नहीं। आर्थिक सुधार के काम में ही यदि सरकार से काफी सहायता मिले तो काम सरल होता है। किन्तु ऊपर की तीन चीजों के बिना सरकारी सहायता कुछ भी नहीं कर सकती। यदि तू खादी-विज्ञान में सचमुच पण्डित हो गई और कोई

भी प्रलोभन हो तो भी तू देहात से न खिसकी तो तूने शिक्षा उस समय तुझे प्रत्यक्ष अनुभव होगा।

गाय के दूध का आग्रह नहीं रखती, यह ठीक नहीं। खाना में खाओ तब तू गाय का घी और पेड़ा रख सकती है। पेड़ा बिना चीनी का, मानो केवल खोये का। उसके साथ खाना चाहो तो गुड़ खाना चाहिए। पेड़ा रखा जाने के बजाय उसका चूर्ण बनाकर गर्म पानी में उसका दूध बनाया जा सकता है। उसमें केवल विटामिन (जीवन-तत्त्व) की कमी होती है। किन्तु थोड़े दिन विटामिन न मिला तो उससे कोई नुकसान नहीं होता।

——अभी ब्रह्मचारी नहीं रहेंगे, यह बात समझने लायक है। इन्द्रिय-निग्रह जो नहीं कर सकता वह विवाह कर ले। किन्तु विषयों का गुप्त सेवन करना मुझे खराब मालूम होता है। मनुष्य का पतन विषयों के गुप्त सेवन में है। ऐसा करने से मर्यादा नहीं रहती। मुझे गार्हस्थ्याश्रम से जरा भी द्वेष नहीं। वह आवश्यक स्थिति है, सुन्दर है। किन्तु आश्रम माने उसके धर्म में धर्म आता। गार्हस्थ्यधर्म स्थूल है। स्वच्छन्दता निन्दनीय है। मेरा सब विरोध स्वच्छन्दता के बारे में है।

और ब्रह्मचर्य-पालन के विषय में जैसा लिखा तो अन्त में स्त्री का ही होना चाहिए। ब्रह्मचर्य का महत्त्व और उसकी आवश्यकता सिद्ध करने का बोझ अकेले पुरुष पर ही नहीं होना चाहिए। आज तक अधिकांश में यह बोझ पुरुषों ने ही उठाया है। इससे उस बोझ को अधिकार का रूप मिल गया है। इससे ब्रह्मचर्य की निन्दा हुई है। इतना ही नहीं वह जो सरल होना चाहिए, उसके कठिन हो गया। इतना कि बहुत लोगों को वह असम्भव मालूम होता है। इसमें भी मुझे अद्भुत-सा दोष पुरुषों का ही दिखाई देता है। उन्होंने चाहे जिस प्रकार स्त्री को नीचे ही रखा है। यह करने में कुरानादि और पुराण इन दोनों का झूठा उपयोग किया गया है। जो हो, मनुष्य जाति का आधा

शरीर निर्बल हो गया और रहा। उसका परिणाम यह हुआ कि पुरुष अपने अनेक कार्यों में निष्फल साबित हुआ है। और यह उचित ही हुआ कहा जा सकता है। आज स्त्रियों में थोड़ी-सी जागृति हुई है। फिर भी इस जागृति का कम से कम आज विकृत रूप हो रहा है। पुरुष स्वतंत्रता के नाम पर उसे दूषित कर रहा है। उसका अहंकार बढ़ा रहा है। स्त्री स्वतंत्रता का अर्थ स्वेच्छाचार समझ बैठी है। इनमें से जो स्त्री-पुरुष ऊपर निकल सकें वे निकलें। तुम निकलो।

ता ५—२—१७ बापू के आशीर्वाद

सेगाँव

पत्र—८६

विचार की कला

चि — मुझसे तुम चारों ने समय माँगा होता तो अच्छा हुआ होता। तुम्हारे देहात की परिस्थिति बिना समझे मैं क्या कह सकता था? यह तर्क मुझे स्वीकार है। तेरा यह कहना भी सच है कि देहात के अनुभवों के बारे में मेरा अभी आरम्भ ही है। अर्थात् हम सब समान। फिर भी मेरे विचारों में कुछ मौलिकता है और इस सब का कारण अहिंसा है। अतः तुम चारों को कुछ जानने लायक मिल जाता।

तू विचार करने की कला प्राप्त करने लगी है यह मुझे ठीक मालूम होता है क्योंकि के तेरे भाषण में मुझे विचार-शून्यता दिखाई दी थी। ये विचार मुझे मस्तिष्क से निकलने वाले धुएँ की तरह मालूम हुए थे। वे हृदय के उद्गार नहीं थे। मुझे समय निकाल कर तुमसे उस बारे बोलना था। और दो और दो चार होते हैं उसी प्रकार उन विचारों की शून्यता आसानी से सिद्ध कर देती थी। किन्तु मुझे समय ही नहीं मिला। मुझे तेरी विचार-शून्यता सिद्ध कर देने की जल्दी नहीं थी। अतः मैंने तुझे रोका नहीं। मुझे इतना विश्वास है कि तू अपनी यह कमी कभी तो अपने आप देखेगी। अभी तेरे पत्र में ही मुझे उसकी

उस व्यक्ति से पूछना चाहिए। मैं ऐसा नहीं कहता कि असत्य का आचरण न हुआ होगा किन्तु जाँच होनी चाहिए। मुझे यदि किसी ने बताया कि तूने ऐसा-ऐसा किया तो तुमसे पूछे बिना मुझे उसे मान लेना चाहिए क्या!

तेरे उस मानपत्र में तेरे हृदय के उद्गार होंगे, हाँ। किन्तु तू अब जो लिख रही है उससे तेरा मानपत्र असत्य था, इतना तो कबूल करेगी न! वह कैसा भी हो। मैंने तुम्हें सूचित कर दिया है कि मेरा अनुभव तेरे अनुमान से असत्य था। मेरे अनुभव से तेरे अनुमान का मूल्य तू अधिक रख सकती है किन्तु मैं क्या करूँ।

ता० ११—५—१७ बापू के आशीर्वाद

दीपक—अहमदाबाद